

श्री श्री दया माता जी का पत्र

प्रिय भक्तों,

पूज्य गुरुदेव ने अपने पाठों में जिन अनेक आध्यात्मिक गुणों को विकसित करने पर बल दिया है उसमें से एक न एक का निरन्तर निश्चयपूर्वक पालन करने से मेरी समय-समय पर बहुत सहायता हुई है। इधर मेरे विचार 'साहस' के ईर्दगिर्द घूमते रहे हैं जो भौतिक या आध्यात्मिक लक्ष्य को प्राप्त करने में हमारे जीवन को अदम्य शक्ति प्रदान करता है। जब हम अपना लक्ष्य खोने लगते हैं तो 'साहस' ही हमें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है और हम विजेता की भाँति जीवन की चुनौतियों का सामना करने में समर्थ होते हैं। तभी हम पूरी ईमानदारी व सच्चाई के साथ अपने सर्वोच्च लक्ष्य की ओर बढ़ते जाते हैं। यह एक ऐसी दिव्य-शक्ति है जिसकी प्रेरणा से हम अपनी दुर्वलता छोड़कर, लक्ष्य को पाने के लिए कठिनाईयों का सामना करते हुए विजयी होते हैं।'

कभी-कभी हमें प्रतीत होता है कि साहस जैसा गुण केवल कुछ ही लोगों को ईश्वरीय उपहार के रूप में प्राप्त होता है। परन्तु वास्तव में यह गुण प्रत्येक व्यक्ति में होता है। यह एक ऐसी सकारात्मक शक्ति है जो हमारे जीवन के कठिन समय के अनुभव के क्षणों में व्यक्त होती है। प्रत्येक व्यक्ति 'भय' का अनुभव करता है लेकिन उसके वश में हो जाना अनुचित है। भय के कारण जब परेशानी आरंभ हो तब स्वयं से प्रश्न करो — ''मैं किससे भयभीत हूँ?'' भय के कारण को पहचान लेने के बाद उसका सामना करने के लिए शांतिपूर्वक अपने विवेक से काम लो। अपनी तीव्र इच्छा शक्ति के अनुसार आचरण करो, और तव तुम अनुभव करोगे कि तुमने विरोधी परिस्थितियों को अपने वश में कर लिया है न कि तुम उनके वश में हो गये हो। मानव का स्वभाव है कि वह कठिनाईयों से वचना चाहता है परन्तु जब तुम एक बार कठिन चुनौतियों को अपने सामने पाकर उन्हें स्वीकार कर लेते हो और जरूरत पड़ने पर अपनी सुख-सुविधा की परवाह न करके उनका सामना करने के लिए कमर कस लेते हो तब तुम अपने आपको आश्चर्यजनक रूप से शक्तिशाली पाओगे। प्रत्येक बार तुम कुछ ऐसा कार्य अवश्य कर लोगे जिसको तुम पहले कर पाने में स्वयं को असमर्थ पा रहे थे और इस प्रकार तुम अपनी आत्मिक शक्ति को अनुभव तथा व्यक्त करोगे।

'साहस' जैसा गुण ईश्वर के प्रति असीम आस्था के साथ जुड़कर अटल हो जाता है। गुरुदेव ने कहा है कि ईश्वर के साथ सम्पर्क होने पर भय का अन्त हो जाता है। प्रतीक्षा क्यों? योगाभ्यास के माध्यम से तुम ईश्वर के साथ एकाकार हो सकते हो ''जब ध्यान के द्वारा तुम उस परमात्मा के साथ प्रेमपूर्ण संबंध बना लोगे जो सदा तुम्हारी रक्षा करता है तो सांसारिक सुख-दुःख तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ पाएगें। तुमको अनुभव होगा कि ईश्वर की दिव्य शक्ति तुम्हारा मार्ग दर्शन कर रही है और प्रतिपल तुम्हारी रक्षा भी कर रही है। अपने अध्ययन वाले कक्ष के द्वार पर मैंने पूज्य गुरुजी की यह प्रार्थना लगा रखी है : ''हे जगन्माता! मैं अपने जीवन तथा मरण, दोनों में तुम्हारी गोद में सुरक्षित बैठा हूँ।''

तुम यह बात जान लो कि व्यक्ति के हृदय में ''साहस'' तभी उत्पन्न होता है जब ईश्वर के असीम प्रेम में उनकी पूर्ण आस्था होती है।

ईश्वरीय प्रेम तुम सभी को प्राप्त हो,

Daya Mata

श्री श्री दया माता

योगदा सत्संग

(सेल्फ-रियलाइज़ेशन)

III/2002

श्री श्री परमहंस योगानन्द द्वारा संस्थापित

शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वस्थता हेतु समर्पित

(उचित भोजन, सही जीवन-यापन और ईश्वर की सर्वशक्तिमान दिव्य ऊर्जा द्वारा शरीर को पुनः शक्ति प्रदान कर शारीरिक रोग का निवारण करना; एकाग्रता, रचनात्मक विचार एवं प्रसन्नता द्वारा मन से असंतुलन और अयोग्यता को दूर करना; और ध्यान द्वारा सदा-सम्पूर्ण आत्मा को आध्यात्मिक अज्ञान के बंधनों से मुक्त करना)



आवरण पृष्ठ : श्री श्री परमहंस योगानन्द, बोस्टन में, 1922

श्री श्री दया माता जी का पत्र, पृष्ठ 1









योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया/ सेल्फ-रियलाइज़ेशन फेलोशिप का अधिकृत प्रकाशन

इस पुस्तक की ट्रेड ड्रेस (Trade dress) सेल्फ-रियलाइज़ेशन फेलोशिप की ट्रेड मार्क है।

योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया
योगदा सत्संग मठ
21, यू० एन० मुखर्जी रोड, दक्षिणेश्वर, कोलकाता-700 076, पश्चिम बंगाल द्वारा भारत में मुद्रित और प्रकाशित

वर्ष में चार बार प्रकाशित; 12.50 रु. एक पुस्तिका के; 50.00 रु. एक वर्ष के (4 पुस्तिकाएँ); 135.00 रु. तीन वर्ष के (12 पुस्तिकाएँ)।

अनंत प्रेम की फुसफुसाहट

श्री श्री परमहंस योगानन्द

की ज्ञान–विरासत से चयनित अंश

ईश्वर सदा सर्वदा आपको चुपके से

फुसफुसाहट भरी आवाज़ में कहता है :

"एक भी शब्द बोले बिना मैंने सदा तुमसे प्रेम किया है। केवल मैं ही सत्यपूर्वक यह कह सकता हूँ : 'मैं तुमसे प्रेम करता हूँ' क्योंकि मैं तुम्हारे जन्म लेने से पूर्व भी तुम्हें प्रेम करता था; मेरा प्रेम तुम्हें जीवन प्रदान करता है और यहाँ तक कि इस क्षण भी तुम्हें जीवित रखे हुये है और तब भी जब मृत्यु के द्वार के पीछे तुम्हें बंदी बना लिया जायेगा, जहाँ पर कोई भी यहाँ तक कि तुम्हारा महानतम मानवीय प्रेमी भी नहीं पहुँच सकता, केवल मैं ही तुमसे प्रेम करता रहूँगा।"



हमारे प्रियजन हमें सदा के लिये प्रेम करने का वचन देते हैं, लेकिन क्या होता है उन वचनों का जब वे मृत्यु की नींद में डूब जाते हैं और उनकी

स्मृति उनका साथ छोड़ देती है? वह कौन है जो बिना कुछ बोले हमसे सदा के लिये प्रेम करता है? वह कौन है जो हमारा ध्यान रखता है जब सब हमें भूल जाते हैं? वह कौन है जो तब भी हमारे साथ रहेगा जब हम इस दुनिया के मित्रों को छोड़ जायेंगे? केवल भगवान!



कुछ व्यक्ति भगवान को ऐसा चित्रित करते हैं मानो वह बड़ी अकड़ के साथ अज्ञान की धूनी देकर और अग्नि में चलाकर मनुष्य की कड़ी परीक्षा लेता है और उसके कार्यों की निर्ममता से जाँच करता है। इस प्रकार वे ईश्वर के एक प्रेममयी, करुणामयी, दैवी पिता जैसे सच्चे स्वरूप को तोड़-मरोड़ कर एक भयंकर क्षमाविहीन और बदला लेने वाले तानाशाह जैसे झूठे स्वरूप की रचना कर देते हैं। लेकिन जो भक्त ईश्वर के साथ तदात्मता स्थापित कर लेते हैं, वे जानते हैं कि ईश्वर करुणामय है, अनंत प्रेम और कल्याण का भंडार है। और उसकी किसी अन्य रूप में कल्पना करना मूर्खता है।

जिस प्रेम भरे मनोयोग से ईश्वर ने हर प्राणी की रचना की है, उससे हमें सीख लेनी चाहिए कि वह कोई क्रोधी आततायी नहीं है वरन् वह अति कोमल, करुणा से सरोबार एक पिता है जिसे पृथ्वी के अपने इस घर का प्रत्येक सदस्य अत्यंत प्रिय है।

किस प्रकार ईश्वर का प्रेम समस्त ब्रह्माण्ड को अपने में समा कर रखता है

प्रेम एक स्वर्ण दुर्ग है जिसमें अनंतता का राजा समस्त सृष्टि के परिवार को रहने के लिये जगह देता है।



ईश्वर अनंत परमानन्द था; परन्तु वह अकेला होने से उस परमानन्द का आनन्द लेने वाला उसके सिवा कोई नहीं था। इसलिये उसने कहा : ''क्यों न मैं एक सृष्टि की रचना कर अपने को ही अनेक आत्माओं में विभाजित कर लूँ ताकि वे सब आत्माएँ उस नाटक में मेरे साथ खेलें!''

ईश्वर (ब्रह्म) के हृदय में दैवी प्रेम था — अप्रत्यक्ष, अपरिभाषित, अव्यक्त, अप्रयुक्त। तो उसने अपने हृदय को फाड़ दिया और उसे निचोड़ कर असंख्य ज्योतिकण प्रवाहित कर दिये ताकि वे एक अव्यक्त अस्तित्व से निकलकर अपने आप को व्यक्त कर सकें। और इस प्रकार एक अनंत हृदय के केंद से प्रेमलिप्त तारागण उत्पन्न हुये जिनसे ब्रह्माण्ड में तैरते सौरमण्डली नक्षत्र बिंदुओं, नभमण्डलों का निर्माण हुआ। तब उसका दैवी प्रेम कई शक्तियों में विभाजित हो गया ...

ईश्वर अनंत काल से एक मृदु स्वर में हर वस्तु को पुकार रहा है, अपने में विश्राम करने के लिये — अपने दुःख विनाशी, प्रकाशमय प्रेम के उफान में एक होने के लिये

प्रेम की उत्पत्ति नक्षत्रों की परस्पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति में संतुलन स्थापित करती एक सामंजस्यपूर्ण शक्ति में हुआ, अन्यथा पृथ्वी सूर्य के ज्वलंत प्रेम में अपने आप को खो बैठती। ईश्वर ने तारागणों को, सूर्यगणों को और तैरते ब्रह्माण्डों को अपनी तालबद्धता के महानतर प्रेम से बाँधा ताकि वह आपस में टकराकर न तो अपना नाश कर सकें और न ही विनाशकारी अग्नियों से आकाश के नीले शांत जंगलों में आग लगाकर वहाँ रहने वालो को कष्ट पहुँचायें।

पृथ्वी अपने बच्चों को — मुस्कुराते फूल, गंभीर पर्वत, ठांठे मारते सागर, प्रफुल्ल पवन, चंचल पंख लगे पक्षी, और मानव — इन सबको अपने कोमल, आकर्षणमय, मातृत्व प्रेम की शक्ति से पकड़कर अपनी नर्म छाती से गिरने से बचाती है। गुरुत्वाकर्षण का संगीत पृथ्वी का ईश्वर से प्राप्त दैवी प्रेम है जो सूर्य भगवान के चारों और उसके साथ तालबद्धरूप में नाचते उसके सुन्दर स्थलों को आपस में पकड़ कर रखता है। यह दैवी प्रेम अति व्यस्त मानव-मधुमक्खियों को लुभाने के लिये सुगंधित पंखुड़ियों को एकत्र कर पकड़ रखने की खातिर डंठल बन गया, ताकि वे मधु और सुगंध के दिव्य प्रेम का पान कर सकें। ईश्वर मूक रूप से रंगों और आकारों की झाँकियों से मखमली फूलों की सेज पर अपने प्रेमपूर्ण सुन्दर स्वप्न के नाटक की रचना करता है।

ईश्वर प्यासी आत्माओं को आमंत्रित करता नदी बन गया, ताकि वे उसके जलरूपी अमृत प्रेम का पान करें और किनारे बैठ उसका ध्यान करें, वह मानव जाति को लुभाता पर्वत बन गया कि वे समस्त नश्वर मानवीय प्रेम के ऊपर मंडराते उसके गगनचुंबी प्रेम के दर्शन कर सकें। फिर अपने प्रेम की विशालता को प्रकट करने के लिये वह सागर बन गया।



फिर वह दिव्य प्रेम मानवीय मस्तिष्क, हृदय और शरीर में क्रियाशील हो गया, वह अरबों, ख़रबों कोशिकाओं में धड़कता है और पेंचीदा कार्यप्रणाली, मनोयोग और स्वास्थ्य संबंधी नियमों द्वारा उनकी देखभाल करता हैं। रोगी वह है जिसने ईश्वर के प्राकृतिक स्वास्थ्य संबंधी नियमों की प्रेममयी सुरक्षा की अवहेलना की। स्वास्थ्य संबंधी नियमों के पालन द्वारा हम ईश्वर के सुरक्षा नियमों के प्रति सम्मान दर्शाते हैं।



सृष्टि में प्रेम सबसे उच्च, सबसे महान, सबसे अधिक प्रेरणादायक नियम है। सारी आत्मायें, सारा विश्व, संपूर्ण ब्रह्माण्ड उस प्रेम की अनंत दिव्य लयबद्धता के संपर्क में है। ईश्वर द्वारा रचित समस्त सृष्टि में धड़कती यह दिव्य एकात्मता उसका हृदय है। इस ज्ञान की अनभिज्ञता सृष्टि में असंगति पैदा करती है।



यह दिव्य प्रेम का जल प्रवाह अज्ञानतावश तैयार की गयी व्यक्तिगत, सामाजिक, देशभक्तिपरक और मानवीय प्रेम की सीमाओं का विनाश करने के लिये एक बाढ़ के समान हृदय के दरवाजों को भेद रहा है। तब वह दिव्य प्रेम हर हृदय को विश्राम एवं शक्ति प्रदान करने के लिये पुनः अपने अनंत प्रेम के आरोग्यकारी, शांत वक्षस्थल में समा लेता है।



ईश्वर अनंत काल से एक मृदु स्वर में हर वस्तु को पुकार रहा है, अपने में विश्राम करने के लिये — अपने दुःख विनाशी, प्रकाशमय प्रेम के उफ़ान में एक होने के लिये, लेकिन उसके प्रेम का दिव्य आकर्षण विकास की स्वाभाविक गति के माध्यम में क्रियाशील है। यदि ईश्वर चाहता तो क्षणभर में हर वस्तु को अपने अंतर में वापिस खींच सकता था लेकिन उसने अपने हर बच्चे को स्वतंत्र इच्छाशक्ति का वैसा ही आनन्द और विशेष अधिकार दिया जिसका भोग वह स्वयं करता है वह दिव्य प्रेम हर वस्तु को अपनी संपूर्णता में केवल तभी पिघला सकता है जब समस्त प्राणी एवं वस्तुयें उसके विकास चक्र में निहित दिव्य प्रेरणा का अनुसरण करें।

~

आप सब लोग ईश्वर की महानतम रचना हो, उसकी अन्य सब रचनाओं से भी महान, आपको सोचने एवं तर्क करने की शक्ति प्राप्त है। ईश्वर कहता है : "मैंने तुम्हें इच्छाशक्ति दी, स्वतंत्रता दी, एवं स्वतंत्र इच्छा दी कि कदाचित तुम हर वस्तु का त्याग कर मुझसे प्रेम करो जिसने तुम्हें ये सब उपहार दिये।"

यह ईश्वर ही है जो मानवीय संबंधो के माध्यम से हमें प्रेम करता है

वह तुम्हें, तुम्हारे सब शुभचिंतको से अधिक प्रेम करता है, वह तुम्हें तुम्हारे पिता, माता और प्रियतम से भी अधिक प्रेम करता है क्योंकि उसी ने उन सब को तुम्हें दिया, वह प्रियतम है, वह ही माता एवं पिता है।

~

आपकी माता कभी भी आपको इतना प्रेम नहीं कर सकती थी यदि वह सर्वव्यापी जगन्माता का अंश न होती। यही बात अन्य सब मानवीय संबंधो पर भी लागु होती है। अपने नश्वर पिता में आप परमपिता को देखते हैं। यह ईश्वर ही है जिसने आपको अपना प्रेम अर्पण करने के लिये प्रियतम का रूप धारण किया है। यह ईश्वर ही है जिसने आपकी सेवा करने के लिये सेवक का रूप रचा है, ... यह ईश्वर ही है जो आपके मित्र के रूप में अपने को व्यक्त कर रहा है।

~

ईश्वर आपको भी उतना ही प्यार करता है जितना कि जीसस और अन्य संतों को, ईश्वर अहैतुकी प्रेम है क्योंकि वह सबमें समाया है! वह जहाँ भी रहता है वहीं उसका प्रेम और भक्ति रहती है।

हमारे प्रति ईश्वर के प्रेम को कोई भी कम नहीं कर सकता

आप अपने द्वारा की गई गलतियों के प्रति चिंतामग्न हो सकते हैं लेकिन ईश्वर नहीं; जो बीत गया सो बीत गया, आप उसके पुत्र हैं और

आपसे जो भी गलतियाँ हुई वे इसलिये हुई क्योंकि आप उसे जानते नहीं थे। अज्ञानतावश आपसे हुई गलतियों के लिये वह आपको दोषी नहीं ठहराता। वह केवल इतना चाहता है कि आप पुनः उन गलतियों को न दोहरायें। नर्क का अग्निकुण्ड मनुष्य की बदला लेने की उस प्रवृत्ति का काल्पनिक प्रतिरूप है जो वह ईश्वर में भी देखता है। लेकिन बदला लेना ईश्वर के विधान में नहीं है। अपनी महानता में वह अपने बच्चों से सदा प्रेम करता है, हमें उससे कभी भी डरने की आवश्यकता नहीं, हमें केवल अपने से डरना चाहिये। अपने उन गलत कार्यों से जो हमने आत्मा की आवाज़ के विरुद्ध किये, तुम स्वयं को अपने कार्यों के परिणाम से दण्डित या पुरस्कृत करते हो।



तो क्या हमें अनिवार्य रूप से तथाकथित भाग्य या फिर किसी पूर्व निर्धारित नियम के तहत अपने कार्यों के फल भुगतने होंगे? नहीं! ईश्वर कानून एवं प्रेम दोनों है। वह भक्त जो शुद्ध भक्ति एवं विश्वास के साथ ईश्वर के निःशर्त प्रेम की कामना करता है, और अपने कर्मों का दैवी नियमानुसार निर्वहन करता है अवश्य ही ईश्वर के उस आरोग्यदायक स्पर्श की प्राप्ति करता है। प्रायश्चित करने वाले उस भक्त के किसी भी पाप को क्षमा किया जा सकता है जो ईश्वर को अत्याधिक गहनता से प्रेम करता है और इस प्रकार अपने संपूर्ण जीवन को सर्वकरुणामय ईश्वर के संसर्ग में ढाल लेता है।



यह मत सोचो कि आप बदल और सुधर नहीं सकते, हर रात्रि अपने जीवन का विश्लेषण करें और गहन ध्यान करें इस प्रार्थना के साथ : "हे ईश्वर मैं काफी समय से तेरे बिना जीया हूँ! मैं अपनी इच्छाओं के साथ काफ़ी खेल चुका हूँ, अब मेरा क्या होगा?

मुझे तू अवश्य चाहिये। मेरी मदद करो। अपना मौन तोड़ो।" वह दस बार चुप रह सकता है, लेकिन फिर बीच में जब आपको उसकी बिल्कुल भी आशा नहीं होगी वह आपके पास आ जायेगा। वह दूर नहीं रह सकता यदि आप अपाहिज, नेत्रहीन, गूंगे, बहरे और दुनिया द्वारा ठुकराये भी जा चुकें हैं, तब भी आशा न छोड़ें। यदि आप प्रार्थना करते हैं 'हे प्रभु मैं

नेत्रहीन, शरीर से लाचार आपके मंदिर में नहीं जा सकता लेकिन मैं पूरे मन से आपके बारे में सोच रहा हूँ'', तब ईश्वर आता है और कहता है ''मेरे बच्चे! दुनिया ने तुझे ठुकरा दिया लेकिन मैं तुझे अपने आगोश में लेता हूँ। मेरी नज़रों में तुम विजेता हो।''

~

ईश्वर कहता है ''मेरा प्रेम सूक्ष्म एवं रहस्यमय है लेकिन मैं सच्चे भक्त की पुकार का जवाब अवश्य देता हूँ। मैं प्रतिदिन भोजन में से रक्त, मज्जा, मांस, हड्डी एवं मस्तिष्क का निर्माण करता हूँ, एवं अपने बच्चों का पालन-पोषण करता हूँ, लेकिन वे सोचते हैं वे केवल भोजन से जीवित हैं, मेरी शक्ति से नहीं, इसलिये कई अनमने भाव से मेरा ध्यान करते हैं; अपने अवचेतन मन में इस निराशाजनक विचार के साथ कि मैं उनकी प्रार्थना का उत्तर नहीं दूँगा या मुझे प्रसन्न करना कठिन है, या मैं भक्ति का उत्तर नहीं देता, या फिर मैं सब भक्तों को उत्तर नहीं देता।

लेकिन मैं अपने सब बच्चों की मदद करता हूँ, उन्हें जब भी मेरी आवश्यकता पड़ती है मैं बिना उनके जाने उनकी मदद करना पसंद करता हूँ, इसलिये अधिकतर लोग मुझे नहीं जानते और सोचते हैं कि मैं दूर हूँ।

चाहे तुम अपनी कमज़ोरियों, विघ्नो, बुरी आदतों के चंचल विचारों के पहाड़-तले ही क्यों न दबे हों, लेकिन यदि तुमने हिम्मत नहीं हारी और मुझे आत्मा की गहराई से, शांति से या फिर चिल्ला-चिल्ला कर मदद के लिये मुझे पुकारते रहे, तो मैं निश्चय ही तुम्हारे उद्धार के लिये आऊँगा, अपने उस बच्चे की भक्तिपूर्ण पुकार का जो मुझे शरीर, मन और आत्मा में सर्वव्यापी, नित्य नवीन आनन्द, ध्यान में निरंतर बढ़ते परमानन्द के रूप में जानने के लिये संघर्ष करते हैं, प्रार्थना करते हैं, और मेरा ध्यान करते हैं, मैं खामोशी से, एवं गहनता से उत्तर देता हूँ।

~

मैं प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर तुम्हें अपने प्रेम का अविनाशी उपहार प्रदान करें। लेकिन बिना प्रयत्न के तुम्हें उसकी प्राप्ति नहीं होगी। यदि तुम केवल 25% प्रयत्न करो तो बाकि तुम्हें ईश्वर और गुरु से प्राप्त हो जायेंगे।

~

तुम्हें कोई अन्य ईश्वर की प्राप्ति नहीं करा सकता। जब तक तुम स्वयं प्रयत्न नहीं करोगे, वह तुम्हारे पास क्यों आएगा? तुम्हें ईश्वर को अपने संपूर्ण हृदय से, संपूर्ण मन से, आत्मा की संपूर्ण शक्ति से प्रेम करना चाहिये। तुम्हें उसे यह जताना पड़ेगा कि तुम शत-प्रतिशत उसे चाहते हो। तब वह अवश्य आयेगा।

~

ईश्वर कहता है ''महान योगी बहुत कम है इसलिये धरती पर रहने वालो से मुझे यदा-कदा ही बहुमूल्य भेंट प्राप्त होती है — अपनी आत्मा का पूर्ण समर्पण। इसलिये मैं आँसूओं में भीगा भक्ति से सुगंधित छोटा सा पुष्प भी उन भक्तों से खुशी से स्वीकार करता हूँ जिनके पास मेरे लिये समय कम है, हालाँकि मैं उन्हें अपना समय एवं उपहार देता हूँ। मानव के क्षणभंगुर एवं अति नगण्य कर्म भी ईश्वर की उपस्थिति की दिशा में मील का पत्थर सिद्ध हो सकते है। सच्चे भक्त संपूर्ण भक्ति से ईश्वर को अपनी फलती-फूलती आध्यात्मिक सूझ-बूझ एवं अनुभूतियों के जीते जागते पत्ते, अपने हृदय की गुप्त बगिया से चुने हुये प्रेम-पुष्प, अपने निःस्वार्थ कर्म के फल एवं ध्यान की नदी से श्रद्धापूर्वक समेटे हुये अपने अतीन्द्रीय दैवी संपर्क के पवित्र जल की भेंट चढ़ाते है।*

सचमुच ईश्वर कितना करुणामय, दयालु एवं निष्पक्ष है जो इतनी ही तत्परता से न केवल महान योगियों के परमानन्द को स्वीकारता है बल्कि उन भक्तों की भेंट को भी जो अपना सर्वस्व उसे अर्पण कर देते हैं, चाहे वह कितना ही नगण्य ही क्यों न हो। योगी ईश्वर का अनुभव अद्भुत माध्यमों से करते है। संघर्षरत भक्तों को दैवी विचार एवं प्रेरणा का आशीर्वाद मिलता है, ईश्वर की शांत प्रेममयी पुकार उनको सदा उसकी प्रतिक्षारत उपस्थिति की तरफ आगे बढ़ने के लिये बहलाती एवं प्रेरणा प्रदान करती है।

~

---

* पत्रं, पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥

ईश्वर अपने भक्तों को अत्याधिक रूप से पुरस्कृत करता है। लेकिन 'पुरस्कार' शब्द मेरे लिये तिरस्कृत है क्योंकि मैं ईश्वर से किसी पुरस्कार की कामना नहीं करता। क्योंकि उसने मुझे अपने निःशर्त प्रेम के स्वामित्व का अधिकार दिया है, अतः मैं उसे उसी प्रेम की भेंट देना चाहता हूँ, यदि वह एक हज़ार वर्षों तक भी उत्तर नहीं देता तो भी क्या? आप ईश्वर से उतनी ही तत्परता से प्रेम करते रहें और यहाँ तक की उसे दर्शन देने के लिये भी न कहें। उसे अपना प्रेम निःशर्त प्रदान करें। भक्ति के मार्ग पर भक्त कहता है ''हे प्रभु! मैं तुम्हें खुशी-खुशी अपना प्रेम भेंट करता हूँ, चाहे मेरी भेंट अपर्याप्त ही क्यों न हो। मुझे तुम्हारे उत्तर की चाह नहीं, न ही मैं तुम्हें अपना प्रेम स्वीकार करने के लिये कह रहा हूँ। चाहे तुम इसे स्वीकारो या नहीं, चाहे तुम उत्तर दो या नहीं मैं तुम्हें अपना निःशर्त प्रेम देने में खुश हूँ। बस यह मेरी सबसे बड़ी खुशी है। मैं अनवरत तुम्हें और फूलों के मन्दिर में, समस्त प्रकृति में, मित्रों और प्रियतमों के मन्दिर में, भक्तों के मन्दिर में और अपनी आत्मा के मन्दिर में बस तुम्हारे स्वरूप को वह प्रेम देता हूँ। मैं जानता हूँ चूँकि तुमने मुझे अपने स्वरूप में बनाया है, इसलिये मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ, तुम चाहे मुझे कभी उत्तर न दो, मेरे प्रभु मैं तुझे प्रेम देता रहूँगा और अनंत काल तक देता रहूँगा। मैं केवल इतना ही जानता हूँ।

जो ईश्वर का सच्चा प्रेमी है वह आनन्द के प्रकाशमय दिनों में और कठिनाईंयों की रातों में सदा समान रूप से उसके साथ रहता है। और क्यों नहीं? जो किसी से प्रेम करते हैं वह रात-दिन केवल अपने प्रेमी के बारे में ही तो सोचते रहते हैं। ईश्वर के साथ। प्रेम संबंध भी ऐसा ही है। यह मानवीय कल्पना में जीवन जीने का सबसे अद्‌भुत तरीका है।

अपने जीवन को ईश्वर के साथ प्रेम संबंध में बदल दो

ईश्वर के साथ प्रेम संबंध सबसे महान प्रेम संबंध है। मानवीय प्रेम क्षणभंगुर है। लेकिन ईश्वर के साथ आपका प्रेम संबंध अनंत है। उसको बिना देखे एक दिन भी नहीं गुज़रना चाहिये। इसलिए मैंने लिखा ''मैंने असंख्य जन्मों में तुझे पुकारा और अपने झिलमिलाते स्वप्नों में तुझे

खोजा'', मैं सदा उससे कहता हूँ कि मुझे बाहर भेजने के लिये वह जिम्मेवार है, लेकिन अन्ततः मैं जान जाता हूँ कि जीवन के इस सारे इंद्रजाल का केवल एक ही अर्थ था कि मैं उसकी महिमा का और अधिक गुणगान करूँ एवं और अधिक तत्परता से उसको खोंजू। सदा केवल वही था। मेरे सब पिताओं के रूप में परमपिता, सव माताओं के रूप में जगन्माता, और सब प्रेमियों के रूप में वह दिव्य प्रेमी, जिसे मैंने कई जन्मों में खोजा, वह प्रेमी है और हमारी आत्मायें प्रेमिकाएँ और जब आत्मा और ब्रह्माण्ड के सबसे महान प्रेमी का मिलन होता है तब अनंत प्रेम की शुरुआत होती है। वह प्रेम जो आप असंख्य जन्मों से मानवीय प्रेम में खोज रहे थे अब अन्ततः तुम्हारा हो जाता है। तुम्हें कभी भी किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता महसूस नहीं होगी।



क्योंकि ईश्वर तुम्हें चाहता है इसलिये मैं यहाँ पर हूँ, तुम्हें घर की तरफ पुकारता — जहाँ मेरा प्रेमी है और जहाँ कृष्ण, क्राइस्ट, बाबाजी, लाहिड़ी महाशय, श्री युक्तेश्वरजी और सब अन्य संत हैं। ईश्वर कह रहा है ''आओ वे सब मेरे आनन्द में मग्न हैं। किसी भी प्रकार का सांसारिक आनन्द-स्वादिष्ट भोजन का, फूलों की सुन्दरता का, भौतिक प्रेम का क्षणभंगुर आनन्द मेरे घर के परम आनन्द की तुलना नहीं कर सकता, आओ! आओ! आओ! हर रात्रि ध्यान में तुम मेरे साथ मेरे अनंत प्रेम में गुज़ारोगे, मुझे याद रखो! मेरे प्रेम को याद रखो।



ओह! प्रेम, मैं तेरा चमकता चेहरा रत्नों में देखता हूँ, फूलों में मैं तेरी सकुचायी लज्जा देखता हूँ, पक्षियों में तेरे कलरव को सुन मैं मंत्रमुग्ध होता हूँ और जब मेरा हृदय सब हृदयों में तेरा आलिंगन करता है तब मैं परमानन्द में स्वप्नील होता हूँ। ओह! प्रेम, मैं प्रत्येक वस्तु में तुझसे मिलता हूँ — थोड़ा और कुछ देर के लिये — लेकिन तेरी सर्वव्यापकता में मैं तेरा आलिंगन संपूर्ण एवं अनंत काल के लिये करता हूँ, तेरे परमानन्द में सदा आनन्दमग्न रहने के लिये। ❑



वाइन ऑफ द मिस्टिक : द रूबाईत ऑफ उमर खय्याम से उद्धरण — *श्री श्री परमहंस योगानन्द जी की एक आध्यात्मिक व्याख्या।* *(योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया द्वारा प्रकाशित)*

जब मृत्यु हमारे प्रियजनों को छीन लेती है

तब किस प्रकार स्वयं को समझाकर आश्वस्त करें

द्वारा श्री श्री दया माता



मारे पवित्र धार्मिक ग्रन्थ इसी कारण अमूल्य हैं कि जब हम उन्हें अपना ध्यान केन्द्रित करके श्रद्धापूर्वक पढ़ते हैं तब हमें जीवन के सत्य एवं वास्तविकता का बोध होता है। जीसस ने कहा है — "यदि तुम मेरी बात को मान कर उसका पालन करते हो तभी तुम मेरे सच्चे शिष्य हो। तभी तुम सत्य को जानोगे और यह सत्य तुम्हें मुक्त करेगा।"* श्रीमद्भगवद्गीता कहती है — हम लम्बे समय तक माया के संसार में रहे हैं। माया के कारण हम पाँचों इन्द्रियों के प्रत्यक्ष ज्ञान, गलत आदतों, प्रतिकूल विचार और कार्यों के जाल में फँसे हुए हैं। गीता हमें याद दिलाती है कि हम ध्यान, आत्म-अनुशासन, विभेदीकरण, छठी इन्द्रिय के विकास, तथा अन्तर्ज्ञान के द्वारा सत्य की प्राप्ति कर सकते हैं। हम केवल शरीर नहीं हैं जो इच्छात्मक अनुभूतियों में उलझा हुआ है जैसे गर्मी और सर्दी, सुख और दुःख, जन्म और मृत्यु। हम केवल मन नहीं हैं जिसकी विचारधाराओं, इच्छाओं और आदतों को स्वीकार करके हमने स्वयं अनेक विशेष गुण स्वयं विकसित कर लिए हैं। हम केवल आत्मा हैं जो शाश्वत एवं अपरिवर्तनीय है। यह आत्मा अनेक प्रकार के भौतिक शरीर धारण करके अनन्त काल तक

---

* जॉन 8 : 32

यात्रा करती है, जब तक यह आत्मज्ञान नहीं हो जाता कि हमारी सहज

रखो, जब आत्मा प्रियजन के भौतिक शरीर का परित्याग करती है तब शोक करने का कोई कारण नहीं है। जब तुम स्वयं परलोक-यात्रा करो तब भी विलाप करना अनुचित है। तुम केवल "शाश्वत आत्मा" हो इसलिए इन बाहरी परिवर्तनों से तुम्हारा कोई लेना देना नहीं है।"

---

* गॉड टॉक्स विद् अर्जुन : भगवद्गीता II : 20

यह उपहार देने के लिये चंदे का विवरण

योगदा सत्संग पुस्तक माला का उपहार निम्नलिखित पते पर भेजें

श्री/श्रीमती/कुमारी ....

पता ....

गाँव/शहर .... राज्य .... पिन कोड ....

प्रेषक : श्री/श्रीमती/कुमारी .... L- ....

पता ....

गाँव/शहर .... राज्य .... पिन कोड ....

कृपया (√) का चिह्न लगाएँ :

वार्षिक पुस्तक माला	1 वर्ष (4 अंक)	3 वर्ष (12 अंक)
☐ अंग्रेजी	☐ रु. 50/-	☐ रु. 135/-
☐ हिन्दी	☐ रु. 50/-	☐ रु. 135/-
☐ बंगाली	☐ रु. 50/-	☐ रु. 135/-

चंदा *योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया* के नाम से राँची स्थित किसी बैंक में देय क्रास किये गये डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा क्रास किये गये भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा भेजा जाना चाहिये।

Yogoda Satsanga Society of India
Paramahansa Yogananda Path, Ranchi 834001, Jharkhand
Tel. (0651) 2460071, 2460074, 2461578

और मृत्यु हम केवल मन नहीं है जिसकी विचारधाराओं, इच्छाओं और आदतों को स्वीकार करके हमने स्वयं अनेक विशेष गुण स्वयं विकसित कर लिए हैं। हम केवल आत्मा हैं जो शाश्वत एवं अपरिवर्तनीय है। यह आत्मा अनेक प्रकार के भौतिक शरीर धारण करके अनन्त काल तक

* जॉन 8 : 32

यात्रा करती है, जब तक यह आत्मज्ञान नहीं हो जाता कि हमारी सहज प्रकृति उस ईश्वर में ही समाहित है जो शाश्वत आनन्द और पूर्ण प्रेम का रूप है।

हमने अपने गुरु, परमहंस योगानन्द जी से सीखा है कि हम किस प्रकार धार्मिक ग्रन्थों से प्राप्त अपने बौद्धिक ज्ञान को दिन प्रति दिन के कार्यों और विचारों में उतार सकते हैं। उन्होंने कहा है कि — "गीता के गहन सत्य को केवल तात्विक ज्ञान के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है बल्कि उसे प्रतिदिन के व्यवहार में उतारना आवश्यक है। सत्य संबंधी ज्ञान मनुष्य के जीवन में उस समय उपयोगी है जब वह सांसारिक माया के कारण उत्पन्न रोगों, मानसिक तनावों, मृत्यु के दुःख और शरीर की नश्वरता को न समझने के कारण संघर्ष में फँसा हो। गीता से प्राप्त ज्ञान के आधार पर मनुष्य इन नकारात्मक विचारों के कारण उत्पन्न विषय परिस्थितियों का सामना दृढ़तापूर्वक करे। वह इस सत्य को सदा याद रखें कि आत्मा पूर्ण ब्रह्म का अंश है, शाश्वत है, तथा किसी भी परिवर्तन से प्रभावित नहीं होती है।"*

"हमें अपने मृत प्रियजनों को भुलना नहीं है। रोने के बजाय हम उन्हें प्रेमपूर्ण श्रद्धांजलि दें।"

मृत्यु माया का एक ऐसा पक्ष है जो सबसे अधिक वास्तविक लगता है। जब कोई निकट का संबंधी या प्रियजन मृत्यु को प्राप्त होता है तब हमारा विलाप करना स्वाभाविक है। अन्य मानवीय भावावेगों की तरह ही कभी-कभी यह शोक अच्छा या बुरा भी हो सकता है। धार्मिक ग्रन्थों तथा ऋषियों के माध्यम से प्राप्त दिव्य संदेश यही है कि, "मेरे बच्चे याद रखो, जब आत्मा प्रियजन के भौतिक शरीर का परित्याग करती है तब शोक करने का कोई कारण नहीं है। जब तुम स्वयं परलोक-यात्रा करो तब भी विलाप करना अनुचित है। तुम केवल "शाश्वत आत्मा" हो इसलिए इन बाहरी परिवर्तनों से तुम्हारा कोई लेना देना नहीं है।"

---

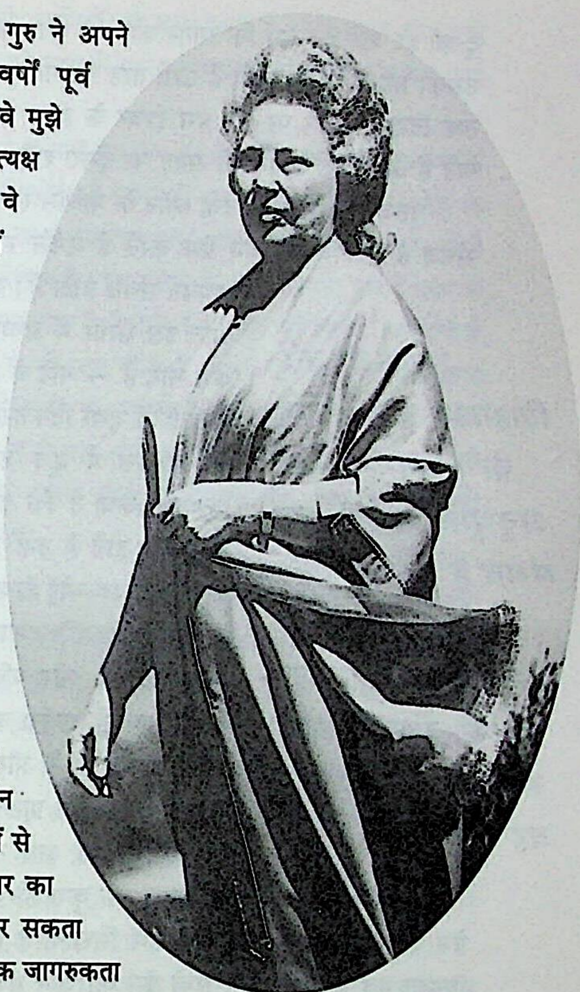
* गॉड टॉक्स विद् अर्जुन : भगवद्गीता II : 20

इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी प्रियजन की मृत्यु पर हम कठोर हृदय बन जाएँ। वर्षों पहले यहाँ पर एक शिष्या की माँ की मृत्यु हो गई थी और वह पूरी तरह उदासीन हो गई। मैं उसके मन की स्थिरता की प्रशंसा करते हुए विचार करने लगी — "क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि वह इस सीमा तक अनासक्त है?" उस दिन शाम को जब हम लोग गुरुजी के पास एकत्रित हुए थे तब उनके द्वारा कहे गए शब्दो को मैं कभी नहीं भूल सकी। उन्होंने कहा था, "अपनी इतनी प्रिय माँ की मृत्यु पर एक आँसू भी नहीं बहा सकी।" मैं हैरान रह गई क्योंकि मैं समझ रही थी कि उसके इस व्यवहार पर गुरुजी गर्व अनुभव करेंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। सभी सन्तों के समान ही गुरुजी के दिव्य प्रेम का मानवीय पक्ष भी था।

जिन्हें हमने सदा के लिए खो दिया है उनके लिए रोना गलत नहीं है परन्तु उसके लिए जीवनभर शोक ग्रस्त बने रहना हानिकारक है। हमें अपने मृत प्रियजनों को भुलना नहीं है। रोने के बजाय हम उन्हें प्रेमपूर्ण श्रद्धांजलि दें। बहुत लोग वर्षों अपने प्रियजनों की मृत्यु पर शोक मनाते हैं। गहरी वेदना अपना स्पंदन प्रसारित करती है। यदि मृत व्यक्ति ग्रहणशील होते हैं तो वे सच में दुःख अनुभव करते हैं। इस तरह के दुःख का स्वागत कौन करेगा? जब मैं अपने प्रिय गुरुजी के विषय में विचार करती हूँ जो वर्षों पूर्व दिवंगत हुए थे; मैं नहीं चाहती हूँ कि वे मेरे लिए दुःख अनुभव करें। मैं चाहती हूँ कि वे सभी मेरा प्रेम अनुभव करें। सृष्टि के अंत तक वे मेरी निष्ठा, मेरी लगन अनुभव करें।

किसी प्रियजन की मृत्यु पर जो आँसू हम बहाएँ वे निःस्वार्थ प्रेम के हों। जब वे आँसू सूख जाएँ तब उनकी जगह, मृत स्वजनों के लिए शाश्वत प्रेम का ऐसा फ़व्वारा निकले जिसकी जलधारा उन पर प्रकाश और आशीर्वाद की वर्षा करे। उन्हें यह मालूम होने दो कि "तुम्हारा भौतिक शरीर नष्ट हो सकता है किन्तु वह एक अस्थायी सवारी ही थी जिसका प्रयोग एक जीवन में ही संभव था। यद्यपि मेरा हृदय तुम्हें खोने के कारण व्यथित है परन्तु अपने उच्चतम आत्मज्ञान के द्वारा मैं जानती हूँ कि तुम केवल शरीर नहीं हो, मन नहीं हो बल्कि तुम एक सुन्दर आत्मिक प्रकाश हो जो दिव्य अनुभूतियों एवं आनन्द से परिपूर्ण है।"

यद्यपि मेरे प्रिय गुरु ने अपने भौतिक शरीर को वर्षों पूर्व त्याग दिया था किन्तु वे मुझे आज भी उतने ही प्रत्यक्ष लगते हैं जैसे कि वे पहले थे, क्योंकि मैं यह नहीं सोचती हूँ कि वे अब नहीं हैं, कहीं चले गए हैं। मैं निरन्तर उन्हें अपना प्रेम अर्पण करती हूँ और आन्तरिक रूप से उनके साथ स्वयं को जुड़ा हुआ अनुभव करती हूँ। वे सदा मेरी अन्तर्दृष्टि में विद्यमान रहते हैं और मैं सदैव उनका मार्गदर्शन अनुभव करती हूँ। तुममें से प्रत्येक व्यक्ति इस प्रकार का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर सकता है। यह तुम्हारी आन्तरिक जागरुकता से संभव है।



हम इस कारण दु:खी हो जाते हैं कि हम मृत प्रियजनों के प्रति अपने संबंधो की निरन्तरता को अनुभव नहीं करते। लौकिक विचार चेतना के अनुसार हम वर्तमान में विद्यमान अस्तित्व को ही स्वीकार करते हैं। हम जीवनरूपी सागर की तरंगों के समान हैं, अत: जब तक अपनी सतह पर रहते हैं एक दूसरे को देखते रहते हैं — एक दूसरे के लिए अपनापन अनुभव करते हैं। जब हम अपनी प्रियजन रूपी तरंग को नहीं देख पाते तब

दुःखी हो जाते है। जैसे कि सागर की तरंगे सतह पर दिखाई देती है परन्तु उसकी गहराई में भी रहती हैं उसी तरह दिवंगत शरीर के नष्ट होने पर भी तथा दिखाई न देने पर भी, हम ईश्वर के हृदय में छिप जाते हैं, विश्राम पाते हैं और पुनः जीवन की सतह पर दूसरा शरीर प्राप्त करते हैं।

गुरुजी की शिक्षाओं तथा ध्यान के माध्यम से यह अनुभूति प्राप्त करना संभव है कि जिनको हम प्रेम करते हैं उनके साथ हमारा स्थायी तथा शाश्वत संबंध होता है। यदि वह प्रेम सच्चा हो। आज इस संसार में सच्चा प्रेम करने वाले बहुत कम लोग हैं — यदि वे आज किसी एक से प्रेम करते हैं तो दूसरे दिन उसे पूरी तरह भूलकर एक नई कल्पना में डूब जाते हैं। मैंने सदा यह विश्वास किया है कि इस जीवन में जो व्यक्ति अति प्रिय होते हैं उन्हें हम पिछले जन्म से ही जानते हैं। जब कोई प्रियजन मृत्यु को प्राप्त होता है, यदि उसके प्रति हमारा प्रेम सच्चा स्थायी और सुदृढ़ होता है और यदि हम उनके लिए निःस्वार्थ भाव से प्रार्थना करते हैं तब हमारा प्रेम उन्हें खींच लाता है और वे दूसरे रूप में, दूसरे जीवन में पुनः हमें प्राप्त होते हैं।

"गुरुजी की शिक्षाओं तथा ध्यान के माध्यम से यह अनुभूति प्राप्त करना संभव है कि जिनको हम प्रेम करते हैं उनके साथ हमारा स्थायी तथा शाश्वत संबंध होता है। यदि वह प्रेम सच्चा हो।"

इसका यह अर्थ नहीं है कि हम जन्म-जन्मान्तर तक कुछ ही आत्माओं के प्रति अपने प्रेम को सीमित रखें। गुरुजी ने हमें सिखाया है कि प्रेम की मूल प्रकृति विस्तृत एवं बृहत है। हम सच्चे प्रेम को जान सकें इसीलिए हमें परिवार एवं मित्रगण दिए गए हैं इसलिए नहीं कि हमारा प्रेम कुछ ही लोगों की परिधि तक सीमित रह जाए। ईश्वर की इच्छा है कि अपने माता-पिता, भाई-बहनों, पति-पत्नी के प्रति सबसे पहले निःस्वार्थ प्रेम को अनुभव करके जो गहरा हो या सतही हो — हम उसे विस्तार दें और सभी में बाँटें। इसका एक यही उपाय है कि हम अपने हृदयगत प्रेम को दूसरों के लिए उसी प्रकार व्यक्त करें जैसा कि अपने घनिष्ट संबंधियों एवं अन्तरंग मित्रों के लिए करते हैं। जिस प्रकार हम अपने पुत्र-पुत्री, पति या पत्नी के प्रति

सहनशील होकर उनकी गलतियों को क्षमा करते हैं उसी प्रकार हम दूसरे लोगों की कमज़ोरियों को समझते हुए उनके प्रति सहनशील बन कर उन्हें क्षमा करें।

जो लोग प्रेम बाँटते हैं उन्हें प्रेम प्राप्त भी होता है। आत्म-केन्द्रित व्यक्ति यदि सोचते हैं कि उन्हें कोई भी प्रेम नहीं करता तो उनके लिए घोड़े के आगे गाड़ी खड़ी करने वाली कहावत लागू होती हैं। तुम्हें प्रेम प्राप्त करने के पहले उसे बाँटना सीखना है। प्रेम बाँटने के लिए उसका तुम्हारे हृदय में विद्यमान होना परम आवश्यक है जिसके लिए मन की शान्ति अनिवार्य है जो स्वयं को समझने से ही प्राप्त होती है। स्वयं को जानने की प्रक्रिया परमेश्वर के साथ तुम्हारे संबंध से आरंभ होती है। यह सब ईश्वर की खोज करने एवं उन्हें प्रेम करने से प्राप्त होता है। ईश्वर को प्रेम करने का सबसे सरल उपाय यही है कि तुम्हारे हृदय में सभी के प्रति सहज प्रेम के साथ ही अपनत्वपूर्ण संबंध हों।

श्रीमद्भगवद्गीता हमें सिखाती है कि जीवन में जितने भी अच्छे लोग हमारे सम्पर्क में आते हैं वे हमारे प्रति ईश्वरीय प्रेम की अभिव्यक्ति है। वे इस धरती पर रह रहे हों या इस जीवन के परे चले गए हों वे सदा ही हमारे प्रति अन्तरंग मित्र की मित्रता को व्यक्त करते हैं। वे हमारे ऐसे प्रेमी हैं जो सब प्रियजनों से बढ़कर हमें प्रेम देते हैं। उस ईश्वर से प्रेम करो जिसकी दिव्य शक्ति सभी आत्माओं में व्याप्त है। वास्तव में वही व्यापक प्रेम का सच्चा स्त्रोत है। बाइबिल हमें बताती है : "तुम अपने प्रियतम ईश्वर से पूरे हृदय से, पूरी आत्मा से, अपनी सम्पूर्ण शक्ति से, अपने पूरे मन से प्रेम करो और अपने पड़ोसी से अपने जैसा ही प्रेम करो।"*

ऐसा प्रतीत होता है कि इन पवित्र ग्रन्थों के लेखक हमें यह विचार करने के लिए प्रेरित करते है कि हमारी विचारधारा विस्तृत हो। वे हमें शरीर के बजाय आत्मा से जोड़ने के इच्छुक हैं। क्राइस्ट ने हमें सिखाया है कि अपने जीवन में इस विषय में मत सोचो कि तुम क्या खाओगे या पहनोगे।"† दूसरे शब्दों में हमें अपने शरीर पर इतना अधिक ध्यान देने

---

* ल्यूक 10:27

† ल्यूक 12:22

की आवश्यकता ही है कि हम उसके निरन्तर परिवर्तनों या माँगों में ही खोए रहें ना ही हमें अपने मस्तिष्क पर इतना ध्यान देना है कि हम अपने मूड, पसन्द-नापसन्द तथा भावनाओं में डूबे रहें। हमारा ध्यान उस ओर केन्द्रित होना चाहिए जो 'शाश्वत' है अर्थात् आत्मा जो सत्य है। जितना अधिक हम अपनी आत्मा से जुड़ेंगे उतना ही अधिक हम अपनी अमरता का ज्ञान प्राप्त करेंगे और तब मृत्यु का महत्त्व ही नहीं रहेगा।

जब हमारे प्रियजनों की मृत्यु होगी तब हम शोक के स्थान पर जीवन की निरन्तरता की अनुभूति करेंगे — यह ज्ञात होगा कि आत्मा विकास की एक दशा से दूसरी दशा में प्रवेश करती है। उनकी मृत्यु के शोक में डूबे रहने के बजाय हम उन्हें अपना प्रेम, निष्ठा, शक्ति, सहायता, और प्रेरणा देंगे। जो इस महा यात्रा पर हमसे कुछ पहले जा चुके हैं और जिनसे हम एक दिन फिर मिलने वाले हैं।

चाहे हम दिव्यशक्ति के सागर की ऐसी तरंगे हों जो गहराई में छिपी हैं या हम अस्थायी रूप से विश्राम करने वाली लहरें हों, हम शून्य कभी नहीं बन सकतें। सृष्टि के अन्त तक हमारा अस्तित्व दिव्य शक्ति में छिपा रहेगा और हम परमात्मा के शाश्वत अंश बने रहेंगे। अतः हमें सिखाया जाता है कि सर्वप्रथम हम ईश्वर का साक्षात्कार करने का प्रयास करें क्योंकि इस प्रकार हम उन सभी आत्माओं की निकटता प्राप्त करते हैं जो ईश्वर के हृदय में हैं।*

मैं गुरुजी के शब्दों को सदा याद करती हूँ — "जब तुम युवा हो तभी ईश्वर के प्रेम को संचित करो, ईश्वर से संबंधित ज्ञान को प्राप्त करो। जब तुम जीवन के संघर्ष का सामना करना आरंभ करोगी तब तुम्हारे लिए ईश्वर की अनुभूति करने या उनके संबंध में गहन विचार करने में बहुत कठिनाई होगी।" गुरुजी के वही शब्द मैं तुम सब के लिए दोहरा रही हूँ

---

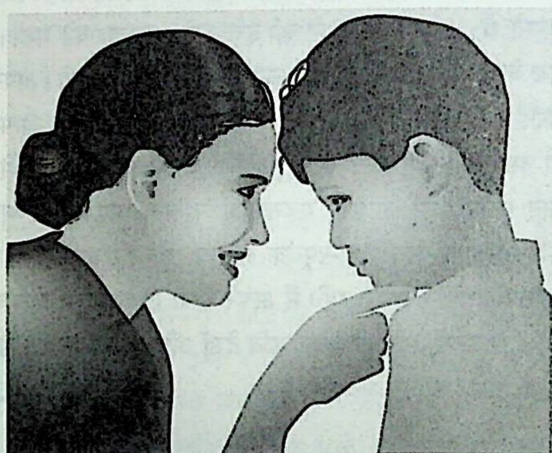
* "जब कोई व्यक्ति इस धरती से चला जाता है तब उसके साथ संपर्क करना संभव नहीं है जब तक कि संपर्क करने वाला व्यक्ति आध्यात्मिक प्रयास में काफी आगे बढ़ चुका है। इसलिए इसके लिए असहाय होकर दुःख करना बेकार है। लेकिन अगर कोई आध्यात्मिक पथ अपने प्रयास से प्राप्ति कर चुका है तब वह भगवान का ध्यान कर बिछुड़े व्यक्ति को देख सकता है, भगवान के ध्यान में मग्न होकर वह अपने प्रिय व्यक्ति को अवश्य देख सकता है या अपने बिछुड़े हुए लोगों के बारे में जान सकता है।" — परमहंस योगानन्द, गॉड टॉक्स विद् अर्जुन — भगवद्गीता।

क्योंकि वे तुम्हारे लिए भी उतने ही महत्त्वपूर्ण एवं अमूल्य हैं जितने मेरे लिए थे। तुम अपने जीवन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य को अपनी आँखों से ओझल मत होने दो। बहुत से लोग ईश्वर की प्राप्ति का प्रयास तो करते हैं परन्तु मुख्य बिन्दु भूल जाते हैं। वे दूसरी उन बातों में उलझ जाते हैं जिन्हें वे अधिक महत्त्वपूर्ण मान बैठते हैं। इसलिए वे ईश्वर के लिए अपने कर्तव्य के प्रति उदासीन होकर उसे अंतिम स्थान देते हैं। यदि तुम ऐसा करते हो तो यह तुम्हारे लिए अति हानिकारक है।

ध्यान करने के साथ ही ''क्रिया योग'' का निरन्तर अभ्यास करो। गुरुदेव कहा करते थे, ''ईश्वर को पाने की इच्छा से आकाश को मथो।'' यदि तुम्हारे पास केवल पाँच मिनट हों तो उनका भी सदुपयोग करो। अपनी आत्मा की गहराई से जगन्माता को पुकारो, ''हे जगन्माता, मैं केवल आपसे प्रेम करने तथा आपकी सेवा करने के हेतु जीवन धारण कर रहा हूँ। मेरी सेवा मेरी ध्यान प्रक्रिया से अधिक महत्त्वपूर्ण न बन जाए। आप मुझे सिखाइए कि मैं आपकी सेवा में शान्तिपूर्वक सक्रिय रहूँ और आपका ध्यान करते समय जागरुकतापूर्वक शान्त रहूँ। मैं अपने सभी प्रियजनों में आपकी झलक देख सकूँ। मैं उनमें आपकी दिव्य छवि देखूँ और जान सकूँ कि मेरा प्रेम आपके शाश्वत प्रेम की अभिव्यक्ति है। ❑

नैतिक बुद्धि का निर्माण

बच्चों की उचित शिक्षा



मीशैल बोर्बा, एड. डी.

विचार के बीज से कृत्य का जन्म होता है; कृत्य के बीज से आदत का; आदत से चरित्र का; और चरित्र के बीज से भाग्य का जन्म होता है

आज के समाज में एक संकट स्पष्ट रूप से सामने आ रहा है; एक ऐसा संकट जिसका दुष्प्रभाव हमारी सबसे बहुमूल्य निधि — हमारे बालकों पर पड़ रहा है। प्रतिदिन अमेरिकी बालकों के विषय में एक नई दुःखद घटना आ जुड़ती है। किन्तु इनमें सबसे बड़ा संकट युवाओं का बढ़ता हुआ हिंसात्मक रवैया है जो ऐसा भयावह रूप ले चुका है जिस अकेले के लिए राष्ट्रीय आपत्काल की घोषणा करने

की आवश्यकता लग रही है। किन्तु इसके अतिरिक्त बालकों की अपने समकक्ष लोगों के प्रति क्रूरता, अपने से छोटे बालकों के प्रति दुर्व्यवहार, असामाजिकता में बढ़ोतरी, अभद्रता में बढ़ोतरी, आमतौर पर पाई जाने वाली बेईमानी जैसे संकेतों ने हम लोगों को हिला कर रख दिया है। जिन्हें दूर करने के उपाय हमें खोजने होंगे। राष्ट्रीय स्तर पर अनेक वैधानिक संशोधनों और शिक्षा में परिवर्तन के जरिए इस स्थिति में सुधार लाने के प्रयास किए गए हैं किन्तु इन महती प्रयत्नों के बावजूद भी यह संकट जैसे का तैसा बना हुआ है। ऐसा इसलिए है कि हमने सबसे महत्वपूर्ण बात को नजरअंदाज कर दिया है : अपने बालकों के जीवन के नैतिक पहलू को। नैतिक रूप से दूषित इस समाज में नैतिकता को बनाए रखने के लिए उन्हें सबसे अधिक आवश्यकता नैतिक बल की ही है। नैतिक मुद्दों को बिल्कुल ही नजरअंदाज नहीं किया गया है और अनेक लेखकों ने इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है। किन्तु यदि माता पिता यह चाहते हैं कि इन कठिन परिस्थितियों में उनकी संतान न केवल नैतिक विचारधारा रखे बल्कि उस पर अमल भी करे तो उन्हें इसके लिए विशेष प्रयत्न करना होगा तभी वे उनकी सहायता कर पाएँगे।

नैतिक बुद्धि

नैतिक बुद्धि वह होती है जिसकी सहायता से उचित तथा अनुचित के बीच भेद किया जा सके; इसका अर्थ है कि सशक्त नैतिक धारणा हो और उस पर उचित तथा सम्मानपूर्वक अमल किया जाए। ऐसी सुन्दर भावना तभी आ सकती है जब किसी व्यक्ति में अनिवार्यत: ऐसे गुण हों जिनसे वह दूसरों की पीड़ा को समझ सके और स्वयं को क्रूरतापूर्ण कार्यों से रोक सके; आवेश में आकर कुछ न कर डाले और स्वयं को नियंत्रण में रख सके; कोई भी निर्णय लेने से पहले सबकी बात खुले मन से सुने; मतभेदों को स्वीकार कर सके और उन्हें समझे; अनैतिक बातों को जान सके; परानुभूति रखे; अन्याय के विरुद्ध डटा रहे; तथा अन्य लोगों के प्रति सम्मानपूर्ण तथा सहानुभूतिपूर्ण रवैया रखे। यही वे मूल गुण हैं जिनसे आपका बालक भद्र तथा अच्छा मनुष्य बन सकेगा; यही चरित्रवान और अच्छा नागरिक बनने के आधार हैं, हम अंपने बालकों से यही अपेक्षा रखते हैं।

यद्यपि नैतिक पतन के अनेक कारण हैं किन्तु यह अवश्य है कि आज के बालक जिस प्रकार के नैतिक वातावरण में पल रहे हैं वह नैतिक बुद्धि के लिए बहुत दूषित है और इसके दो कारण हैं। पहला तो यह, कि अनेक सामाजिक

कारक तत्त्व जिनसे नैतिक चरित्र पनपता है धीरे-धीरे नष्ट होते जा रहे हैं : बड़ों की निगरानी, नैतिक व्यवहार के आदर्श, आध्यात्मिक या धार्मिक प्रशिक्षण, अर्थपूर्ण वयस्क संबंध, व्यक्तिनिष्ठ पठनपाठन, स्पष्ट राष्ट्रीय मूल्य, सामुदायिक सहायता, स्थिरता और माता-पिता की उचित देख-भाल। दूसरे, बालकों को लगातार ऐसे संदेश मिल रहे हैं जो उन मूल्यों के विरुद्ध हैं जो हम बालकों के हृदय में डालना चाहते हैं। इस प्रकार इन दोनों ही बातों से बालकों का नैतिक पतन होता जा रहा है और उनका भोलापन नष्ट होता जा रहा है।

सच्चाई तो यह है कि यह दूषित प्रभाव हमारी संस्कृति पर इस प्रकार छाते जा रहे हैं कि उनसे बालकों की रक्षा करना असंभव सा लगने लगा है। यदि आप अपने बालक को घर की चारदीवारी में बंद करके उसकी बाहरी संसार तक पहुँच को रोक दें तब भी वह जब भी बाहर निकलेगा तो अंधकार उसे घेर लेगा। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि आप उसमें नैतिक बुद्धि जगाएँ जिससे उसमें आंतरिक ज्ञान का ऐसा विकास हो जाए कि वह स्वयं सही और गलत की पहचान करके बाहर के कुप्रभावों से अपनी सुरक्षा स्वयं करने में समर्थ हो जाए। नैतिक बुद्धि से वह इतना सशक्त हो जाएगा कि बाहर के नकारात्मक दबावों के सामने भी वह झुकेगा नहीं और आपके मार्गदर्शन के बिना भी उचित व्यवहार करने में सक्षम होगा।

सबसे अच्छी बात यह है कि नैतिक बुद्धि सीखी जा सकती है और आप शैशवकाल से ही उन्हें सिखाना आरंभ कर सकते हैं। नैतिक विकास के संबंध में हाल ही में हुए शोधकार्य से पता चला है कि छः माह की अवस्था से ही बालक दूसरों के कष्टों को पहचानने लगते हैं और उनमें परानुभूति के अंकुर फूटने लगते हैं। माता-पिता अक्सर छः-सात वर्ष की अवस्था तक बालकों में नैतिक क्षमता जगाने की प्रतीक्षा करने की गलती कर बैठते हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि शायद उनकी बुद्धि उससे पहले कुछ समझने योग्य नहीं होती। किन्तु उनके ऐसा करने का केवल यह परिणाम होता है कि बालक को गलत आदतें सीखने का अवसर मिल जाता है जिनसे नैतिक विकास का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है और उसकी आदतें बदलना और भी कठिन हो जाता है।

नैतिक बुद्धि के सात अनिवार्य गुण

1. **परानुभूति** — अन्य व्यक्तियों की भावनाओं की पहचान करना और उनकी चिंताओं को अनुभव करना
2. **अंतःकरण** — उचित और

भद्रतापूर्ण व्यवहार को जानना और उस पर अमल करना

3. **आत्म-नियंत्रण** — अपने विचारों तथा कार्य-कलापों को इस प्रकार नियंत्रित करना कि आप अपने ऊपर पड़ने वाले आंतरिक और बाहरी दबावों को रोक कर वही करें जो आपको उचित जान पड़े या उचित लगे
4. **आदर** — अन्य लोगों के प्रति शालीन और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करके अपने मूल्यों का परिचय देना
5. **उदारता** — अन्य लोगों के कल्याण तथा उनकी भावनाओं के प्रति सजगता प्रदर्शित करना
6. **सहिष्णुता** — सभी व्यक्तियों के स्वाभिमान और अधिकारों का सम्मान करना, चाहे उनकी आस्थाएँ और व्यवहार आप से अलग भी हों
7. **निष्पक्षता** — खुले विचार रखना तथा न्यायसंगत और निष्पक्ष व्यवहार करना

किसी भी नई आदत को सिखाने में — विशेषकर इन सात अनिवार्य गुणों से संबंधित आदतों को सिखाने में बहुत समय लगता है और धीरज तथा समर्पण की आवश्यकता होती है। इसका उद्देश्य यह है कि बालकों के दैनिक जीवन में नैतिक सिद्धांत इस प्रकार घुल-मिल जाएँ कि वे नैतिक मार्गदर्शन के लिए हम पर कम से कम आधारित रहें। यह तभी हो सकता है जब आप इन गुणों के महत्व को उनके सामने बार-बार दोहराएँ और बालक इन नैतिक व्यवहारों को अमल में लाने लगे। आखिर इसी प्रकार लोग आदतें सीखते हैं और सिद्धांतों को आत्मसात् करते हैं। जैसा कि आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व अरस्तु ने कहा था, ''हम जिन बातों को बार-बार दोहराते हैं, वही हम स्वयं बन जाते हैं।'' आपके बालक के लिए इन छोटे-छोटे पाठों को सीखने के लिए उन्हें अविराम दोहराते रहना ही आवश्यक है।

जब आपका बच्चा इन सातों गुणों को धारण कर ले तो यह मत समझ लीजिए कि उसकी नैतिक शिक्षा सम्पन्न हो गई है। नैतिक उन्नति बालक में जीवनभर आगे बढ़ती जाती है, जैसे-जैसे वह बड़ा होता जाएगा, उसके नैतिक गुणों की निधि भी बढ़ती जाएगी। जैसे-जैसे उसकी नैतिक बुद्धि की क्षमता बढ़ती जाएगी और उसे नैतिक प्रगति के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती रहेंगी, तो उसमें और भी गुण आते जाएँगे, जैसे आत्म-संयम, नम्रता, साहस, समसत्वस्थता, सत्यनिष्ठता, दया तथा परोपकारिता। किन्तु उसकी नैतिक बुद्धि के मूल में वही सातों गुण निहित रहेंगे जो कभी आपने उसे सिखाए थे। इन गुणों को वह अपने चरित्र निर्माण और मानवीय

गुणों को बढ़ाने के लिए सदा एक टैम्प्लेट की भाँति प्रयुक्त करता रहेगा।

लालन-पालन की छ: कार्यकारी बातें

ऐसा क्यों होता है कि कुछ बालक अच्छे और नेक होते हैं, जबकि अन्य बालक नैतिकता के पथ से भटक जाते हैं ? शोधकार्यों से पता चला है कि ऐसा अंतर लालन-पालन में अंतर होने के कारण होता है, जिससे बालक भले और बुरे में भेद करना सीखते हैं। यहाँ छः ऐसी बातें बताई गई हैं जिनका पालन करने से बच्चों में सशक्त और स्वस्थ अंतःकरण का विकास होता है।

1. ***आप स्वयं सशक्त नैतिक उदाहरण बनिए।*** आप ही अपने बालक के पहले और सबसे महत्वपूर्ण नैतिक शिक्षक होते हैं। किन्तु गुणों के विषय में बता देने मात्र का कभी इतना प्रभाव नहीं होता जितना कि अपने जीवन में उन्हें ढाल कर उदाहरण देने का होता है। आपके चयन, प्रतिक्रियाओं और आपकी छोटी-मोटी टिप्पणियों को सुन सुन कर ही बच्चे नैतिक आदर्शों को सीखते हैं। इसलिए जीवन के छोटे-मोटे पलों में आप जो कुछ भी करते हैं, बालक उन्हीं से अपने जीवन के महत्वपूर्ण नैतिक पाठ सीख लेते हैं। आप अपने परिवार, मित्रों, पड़ोसियों और अजनबियों से कैसा व्यवहार करते हैं; कैसी फिल्में देखते हैं तथा कैसी पुस्तकें पढ़ते हैं; कौन से टीवी कार्यक्रम देखते हैं; जीवन के नैतिक संघर्षों के प्रति आपकी क्या प्रतिक्रिया होती है : जैसे बालक की बेईमानी, उसके मित्रों का झूठ बोलना या गंदगी फैलाना — बच्चे इन सबके प्रति आपके निर्णय और व्यवहार को ध्यान से देखते हैं। इसलिए ध्यान रहे कि आपके बच्चे वही देखें जो आप उन्हें सिखाना चाहते हैं।

2. ***अपने बच्चों से निकटतापूर्वक आपसी सम्मान का संबंध स्थापित कीजिए।*** अध्ययनों से पता चला है कि बच्चे सबसे अधिक उन लोगों से प्रभावित होते हैं जिनसे वे गहराई से जुड़े होते हैं और सम्मान करते हैं। अपने बच्चे में नैतिकता का पोषण करने के लिए निकटतापूर्वक प्रेमभरा संबंध स्थापित कीजिए। यह सच है कि ऐसा संबंध स्थापित करने के लिए व्यक्तिगत रूप से उसे काफी समय देना होगा किन्तु ऐसा करने पर ही आप यह सुनिश्चित कर सकेंगे कि आप ही बालक के पहले नैतिक शिक्षक हैं।

3. ***उसके साथ नैतिक आस्थाएँ बंटाइए।*** बार-बार बालक से मूल्यों और आस्थाओं के विषय में बातचीत करने को अपरोक्ष नैतिक शिक्षा कहा जाता है, और अध्ययनों से यह पता चला है कि जो माता-पिता ऐसा अक्सर करते हैं वे अपने

बच्चों को नैतिकतापूर्वक पाल पाते हैं। नैतिक विषयों को खोजिए और उनके सामने आते ही बच्चे से उनके विषय में बात कीजिए। उन सभी स्त्रोतों की खोज में रहिए जहाँ ऐसे विषय मिल सकें, जैसे टीवी कार्यक्रम, समाचार, स्कूल, घर या मित्रों के साथ; फिर आप बालक को बताइए कि आप उन विषयों के बारे में क्या सोचते हैं और क्यों। पाम स्प्रिंग्स में रहने वाली तीन पुत्रियों की माता, जूडी बैगट ने पाया कि "डियर ऐबी" नामक एक कॉलम में उन्हें इस प्रकार के अनेक विषय मिल जाते हैं। वे इस कॉलम में ऐसे पत्रों की तलाश में रहती थीं जिनमें बेईमानी, दूकानों से सामान उठाने की घटनाओं, छोटी उम्र में मद्यपान और यौन दुरुपयोग जैसे विषयों को लिया गया हो। जब उनका परिवार आराम कर रहा होता था तो वे इन पत्रों का जिक्र छेड़ देती थीं और उनके विषय में अपनी पुत्रियों को अपने विचारों से अवगत कराती थीं और नैतिकता पर प्रकाश डालती थीं। उदाहरण के लिए, "यदि मैं होती तो ऐसा करती और इसलिए करती।" या "अच्छा, यदि तुम ऐबी होतीं तो क्या करती? तुम्हारा क्या विचार है, लेखक ने सही किया या गलत?"

4. ***नैतिक व्यवहारों की अपेक्षा और मांग कीजिए।*** विशेषज्ञों ने पाया है कि जो लोग अपने बच्चों को नैतिक रूप से पालते हैं वे उनसे नैतिक व्यवहार की अपेक्षा रखते हैं — उनकी यही मांग होती है। अक्सर ऐसा ही होता है कि बालक वैसा ही करते हैं जैसी कि उनसे अपेक्षा की जाती है, क्योंकि वे जानते हैं कि उनके माता-पिता वही चाहते हैं। सैंटर फ़ॉर कैरेक्टर डिवेलपमेंट के चेयरमैन, डॉ. मार्विन बर्कोविट्ज़ ने इस बात पर बल दिया है कि नैतिक अपेक्षाएँ उच्च किन्तु ऐसी होनी चाहिएँ जिन्हें प्राप्त किया जा सके और उन्हें स्पष्ट रूप से समझा दिया जाना चाहिए और माता-पिता को उन पर दृढ़ रहना चाहिए। यहाँ कुछ ऐसे उदाहरण दिए गए हैं जिनके पालन की अपेक्षा परिवार के सभी सदस्यों से की जा सकती है :

ईमानदारी : "यह अपेक्षा की जाती है कि हमारे परिवार के सभी सदस्य एक दूसरे के प्रति ईमानदार रहेंगे।"

उदारता : "इस घर में हम सभी एक दूसरे के साथ उदारतापूर्ण व्यवहार करेंगे, जैसा कि हम दूसरों से अपने प्रति चाहते हैं।"

शान्ति : "इस घर में हम सब एक दूसरे से शान्तिपूर्वक बात करते हैं और एक दूसरे की बात सम्मानजनक रूप से सुनते हैं। हम आपसी संघर्षों को शान्ति और ईमानदारी से सुलझाने का प्रयास करते हैं।"

सम्मान : "हम सब एक दूसरे से सम्मानपूर्वक ऐसे वचन कहते हैं जिससे उनका सम्मान बढ़े न कि उसमें कमी आए। हम एक दूसरे के निजी मामलों और वस्तुओं का आदर और सम्मान करते हैं।"

घर के कामकाज को सुचारु रूप से चलाने का उत्तरदायित्व। हम सब इस बात पर सहमत हैं कि अपनी क्षमता के अनुसार सभी कार्य अच्छी तरह करेंगे और खेलने से पहले अपना कार्य पूरा करेंगे।"

प्रयास : "हर व्यक्ति से यह अपेक्षित है कि वह अपनी ओर से हर कार्य पूरा मन लगाकर करेगा।"

लगन : "परिवार में कोई भी व्यक्ति प्रयत्न करना नहीं छोड़ता।"

5. ***नैतिक प्रश्नोत्तर करें।*** शिक्षाविद् तथा लेखक, थॉमस लिकना का मानना है कि बालकों के अन्तःकरण के विकास के लिए उनसे प्रश्न पूछना बहुत महत्वपूर्ण है। वे कहते हैं कि उपयुक्त प्रश्न पूछे जाने पर बालकों को अन्य लोगों के दृष्टिकोष को समझने तथा अपने व्यवहार के परिणामों को जानने का अवसर मिलता है, जिसके परिणाम-स्वरूप कुछ समय बाद बालक स्वयं से ऐसे प्रश्न करने लगते हैं, "यदि मैं ऐसा करूँ तो क्या होगा?" अपने बालक की नैतिक तर्क-क्षमता को बढ़ाने के लिए माता-पिता उससे इस प्रकार के प्रश्न पूछ सकते हैं :

"तुम्हारे विचार में मैं इस बात के प्रति चिंतित क्यों हूँ?"

"यदि तुम्हारे साथ कोई ऐसा व्यवहार करे तो तुम्हें कैसा लगेगा?"

"यदि कक्षा में सब लोग हमेशा बेईमानी करते रहें तो क्या होगा?"

"यदि तुम अपनी बात पर अटल न रहो तो क्या तुम पर मेरा विश्वास बना रहेगा?"

6. ***माता या पिता के रूप में आप जो व्यवहार कर रहे हों उसे समझाइए भी।*** अनेक शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि अक्सर माता-पिता अपने अपेक्षित आदर्शों के पीछे छिपे कारणों को स्पष्ट रूप से नहीं समझा पाते जिसके कारण बालक उन आदर्शों के प्रति निष्ठावान नहीं होते। बालक न केवल यह जानना चाहते हैं कि उनसे क्या अपेक्षा की जा रही है बल्कि यह भी जानना चाहते हैं कि वह अपेक्षा किस कारण की जा रही है। यदि आप यह उन्हें ठीक से समझा सकें कि आप उनसे किसी प्रकार के व्यवहार की अपेक्षा किस कारण कर रहे हैं तो उनके नैतिक विकास में सहायता मिलेगी।

आप जो कहते हैं क्या उस पर स्वयं भी अमल करते हैं?

विशेषज्ञ कहते हैं कि कहने की अपेक्षा कुछ करके दिखाने से आप एक

अच्छा उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं। अपने दैनिक जीवन की उन घटनाओं पर विचार कीजिए जिनसे बालक ईमानदारी और सत्यनिष्ठता के पाठ सीख सकते हैं। इस बात का ध्यान रखिए कि बालक हमारे कार्यकलाप को बहुत बारीकी से देखते हैं और अक्सर वे बातें भी देख लेते हैं जो हम उन्हें नहीं दिखाना चाहते।

माता-पिता तथा शिक्षक के रूप में हम यह नहीं कर सकते कि हाथ पर हाथ रखे बैठे रहें और सोचें कि बच्चे स्वयं अच्छे और दूसरों का खयाल रखने वाले मनुष्य बन जाएँगे। अनेक सामाजिक कुप्रभावों के कारण बच्चों का नैतिक विकास संकट में है। किन्तु इनसे निपटने का उपाय है, जैसा कि शोध कार्यों से पता चला है हम अपने बच्चों के जीवन में बदलाव ला सकते हैं, क्योंकि नैतिक बुद्धि सीखी जाती है — और हम यह सिखा सकते हैं। हमारे बच्चे एक अच्छा नैतिक जीवन व्यतीत करें इसके लिए यह आवश्यक है कि हम उन्हें नैतिक व्यवहार की शिक्षा दें। ❑

"सूर्यप्रकाश, पानी, रसदार फल, हरीभरी सब्जियाँ, जो उस परम दाता के हमारे लिये परोक्ष उपहार हैं, उनके लिये प्रत्येक दिन कृतज्ञता प्रकट करने का दिन होना चाहिये। ईश्वर हमसे काम करवाते हैं, ताकि हम उन उपहारों को प्राप्त करने के अधिकारी बनें। सर्वस्व के उस स्वामी को हमारी कृतज्ञता की आवश्यकता नहीं होती, चाहे वह हृदय की कितनी ही गहराई से आए, परन्तु जब हम उनके प्रति कृतज्ञता अनुभव करते हैं, तब हमारा मन सब निधि के उस परम स्रोत पर एकाग्र हो जाता है। इसमें हमारा अपना ही कल्याण है।"

— श्री श्री परमहंस योगानन्द, "आध्यात्मिक दैनंदिनी"

शून्य से शुरुआत

वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की घोर विपत्ति से मिली शिक्षा

द्वारा जोसेप ट्रेंट

(श्री ट्रेंट सेल्फ-रियलाइज़ेशन फ़ेलोशिप के सदस्य हैं और अनेक वर्षों से एस. आर. एफ. के न्यू यॉर्क सिटी केन्द्र में सक्रिय रूप से कार्यरत हैं।)

पहले मैं अपने 11 सितम्बर के अनुभव नहीं लिखना चाहता था क्योंकि लोगों ने जो कुछ मुझे बताया वह बहुत व्यक्तिगत था। किन्तु अंत में मैंने सोचा कि यह न केवल मेरे अपने स्वास्थ्य की दृष्टि से आवश्यक था, बल्कि मैं इसके जरिए दूसरों की सेवा भी कर सकता था।

मैं संगीतकार हूँ और शनिवार, 8 सितम्बर, 2001 को वर्ल्ड ट्रेड सेंटर के ऊपर स्थित विंडोज़ ऑफ़ द वर्ल्ड रेस्तराँ में एक विवाह के अवसर पर मैं संगीत प्रस्तुत कर रहा था। मैं उस जगह अनेक बार संगीत प्रस्तुत कर चुका हूँ और सदा वक्त से सिर्फ इतना पहले पहुँचता हूँ कि वाद्य को बाहर निकाल कर बजाने के लिए समय मिल जाए। किन्तु उस दिन मैं लगभग 45 मिनट पहले पहुँच गया और सोचा कि वहाँ से उस नज़ारे को देखूँ जिसे मैं सदा यों ही छोड़ दिया करता था। मैं पूरी मंजिल पर चारों ओर के दृश्यों को प्रशंसात्मक दृष्टि से निहारता घूम रहा था — लिबर्टी की मूर्ति और द्वीप, न्यू जर्सी, क्वीनस्, ब्रुकलिन तथा स्टेटन द्वीप के सागर तट, भव्य पुल, बंदरगाह में खड़े जहाज़, गगनचुम्बी इमारतें, नगर के किनारे अस्त होते सूर्य का अलौकिक सौंदर्य — साथ ही प्रसिद्ध एंपायर स्टेट बिल्डिंग के परे अपने "अपार्टमेन्ट" को भी ढूंढने का प्रयास कर रहा था। विवाह की रस्मों के दौरान एक हवाई जहाज़ हमारी बिल्डिंग के बहुत निकट से बहुत नीचा उड़ता हुआ चला गया। हमारी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की सांस नीचे रह गई, पादरी महोदय अपना कार्य करते रहे और हमारी जान में जान आई। जब रस्म पूरी हो गई और सब लोग चले गए तो मैं भी अपना वाद्य उठा कर रखने लगा तभी मेरी नज़र वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की स्टेशनरी के एक पैड पर पड़ी जिसे कोई

यह पुस्तिका प्राप्त करने के लिये
अभी चंदा भेजें

द, मारे गये
म्भ स्थापित

। कहना न
.बार-बार
यान में मन
कर सकूं।
न था!
गए मैं
स भय का
युद्धस्थल

सोच में पड़ गया कि "यह कैसे हो सकता है?" मैंने तुरंत "*ए वर्ल्ड इन ट्रांज़िशन*"* उठाई। परमहंस जी द्वारा शिष्यों को दी गई शिक्षा के शब्दों से मुझे

पर खड़े अर्जुन के अवसाद और भगवद्गीता में भगवान कृष्ण द्वारा उन्हें दिए गए उपदेश का ध्यान आया। और मैंने जाना कि यह जीवन हमें भगवान

---

* *सेल्फ-रियलाइज़ेशन द्वारा प्रकाशित।*

योगदा सत्संग पुस्तक माला ... का विवरण

श्री/श्रीमती/कुमारी ....

पता ....

गाँव/शहर .... पिन कोड ....

कृपया (✓) का चिह्न लगाएँ :

वार्षिक पुस्तक माला	1 वर्ष (4 अंक)	3 वर्ष (12 अंक)
☐ अंग्रेजी	☐ रु. 50/-	☐ रु. 135/-
☐ हिन्दी	☐ रु. 50/-	☐ रु. 135/-
☐ बंगाली	☐ रु. 50/-	☐ रु. 135/-

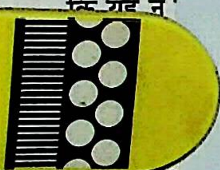
चंदा योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया के नाम से राँची स्थित किसी बैंक में देय क्रास किये गये डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा क्रास किये गये भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा भेजा जाना चाहिये।

Yogoda Satsanga Society of India
Paramahansa Yogananda Path, Ranchi 834001, Jharkhand
Tel. (0651) 2460071, 2460074, 2461578

(श्री ट्रें...
उ...



व्यक्तिगत श...
कि गइ न...



सितम्बर, 2...
ऊपर स्थित...
में एक विव...
प्रस्तुत कर...
बार संगीत...
वक्त से सिर्फ इतना पहले पहुँचता हूँ कि वाद्य को बाहर निकाल कर बजाने के लिए समय मिल जाए। किन्तु उस दिन मैं लगभग 45 मिनट पहले पहुँच गया और सोचा कि वहाँ से उस नज़ारे को देखूँ जिसे मैं सदा यों ही छोड़ दिया करता था।

रह गई, पादरी महोदय अपना कार्य करते रहे और हमारी जान में जान आई। जब रस्म पूरी हो गई और सब लोग चले गए तो मैं भी अपना वाद्य उठा कर रखने लगा तभी मेरी नज़र वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की स्टेशनरी के एक पैड पर पड़ी जिसे कोई



न्यूयॉर्क में वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर 11 सितंबर, 2001 को हुए हमले के 6 माह बाद, मारे गये व्यक्तियों की स्मृति में आकाश की तरफ एक मील ऊपर उठते हुए दो प्रकाश स्तम्भ स्थापित किये गये हैं।

भूल कर चला गया था। मैंने सोच लिया कि वह अवश्य मेरे ही लिए होगा। मुझे क्या पता था कि मैं टिवन टॉवर्स को सदा के लिए ''अलविदा'' कहने जा रह था।

11 सितम्बर को जो कुछ हुआ वह एक बहुत बड़े धक्के के रूप में, भय, और आँखें खोल देने वाले अनुभव के रूप में आया। मुझे याद है कि मैं सोच में पड़ गया कि ''यह कैसे हो सकता है?'' मैंने तुरंत *''ए वर्ल्ड इन ट्रांज़िशन''** उठाई। परमहंस जी द्वारा शिष्यों को दी गई शिक्षा के शब्दों से मुझे बहुत शान्ति और ज्ञान मिला। कहना न होगा कि मैंने उन शब्दों को बार-बार पढ़ा जिससे मैं स्थिर रह कर ध्यान में मन लगा सकूं और अपना कार्य कर सकूं। किन्तु आरम्भ में यह आसान न था!

जैसे-जैसे दिन बीतते गए मैं स्वार्थवश सोचने लगा, ''मैं इस भय का सामना क्यों करूँ?'' तभी मुझे युद्धस्थल पर खड़े अर्जुन के अवसाद और भगवद्गीता में भगवान कृष्ण द्वारा उन्हें दिए गए उपदेश का ध्यान आया। और मैंने जाना कि यह जीवन हमें भगवान

---

* *सेल्फ-रियलाइज़ेशन द्वारा प्रकाशित।*

द्वारा सौंपा गया एक दिव्य कर्तव्य और उत्तरदायित्व है, तथा हमारा जन्म इस समय इसलिए हुआ है क्योंकि हमारे कर्मों का यही विधान है। ईश्वर ने यह इसलिए उचित समझा क्योंकि हमारे भीतर उतनी शक्ति है कि हम स्थिति को समझ सकते हैं और इस कठिन घड़ी में मानवमात्र के उद्धार में सहयोग दे सकते हैं। हमारे गुरुदेव ने कहा है कि, ''ईश्वर कभी तुम्हारे अन्दर निहित सहन शक्ति से अधिक कठिन परीक्षा नहीं लेता।'' किन्तु हमें अपनी आध्यात्मिक मांसपेशियों को व्यायाम द्वारा सदा सशक्त बनाए रखना चाहिए, अन्यथा वे कमजोर पड़ जाएँगी। मेरी समझ, अनिश्चय, करुणा तथा बिना शर्त प्रेम की परीक्षा होने वाली थी और मुझे ऐसे कठिन कार्य करने थे जैसे पहले कभी नहीं किए थे।

मैंने सबसे पहला कार्य यह किया कि सभी की शान्ति और सद्बुद्धि के लिए प्रार्थना करते हुए मैं एस. आर. एफ़. के विश्वव्यापी प्रार्थनामण्डल के साथ जुड़ गया। मेरा दूसरा विचार यह था कि, ''मैं और क्या कर सकता हूँ?'' मैंने मुक्ति फौज को फोन करके पूछा कि क्या एस. आर. एफ़. केन्द्र दुर्घटना स्थल के निकट कार्य कर रहे स्वयंसेवकों के लिए सैंडविच बनाने का कार्य कर सकता है? मुझे बताया गया कि स्वयंसेवकों के लिए दुर्घटना स्थल के पास अब और स्थान शेष नहीं है। लोगों के हृदयों में इतनी करुणा उमड़ रही थी कि उन्हें वापस लौटाया जा रहा था! हमने कहा कि हम अपने स्थान पर ही रह कर कार्य करेंगे, इसलिए हमें उस क्षेत्र के बहुसंख्यक सेवकों में सम्मिलित होने की आवश्यकता नहीं है, बस, हमें अनुमति मिल गई। हमने सब भक्तगणों को न्यू यॉर्क सिटी सेंटर में एकत्र किया और सैंडविच बनाने आरम्भ कर दिए। अपने तीसरी मंजिल पर स्थित सम्मेलन कक्ष में हमने कार्य आरम्भ कर दिया तथा 2 घंटे से कम समय में ही चार सौ से भी अधिक सैंडविच बना डाले। भक्तजनों के चेहरों पर आह्लाद मूर्तरूप में दिखाई दे रहा था! मलबे में कार्य कर रहे लोगों की सेवा करके हम प्रफुल्लता का अनुभव कर रहे थे। बाँटने के लिए यह भोजन सामग्री मुक्ति फौज को दे दी गई।

कुछ दिनों बाद मुझे लगा कि मुझे स्वयं सशरीर कुछ और योगदान देना चाहिए। मैं मानता हूँ कि यह इच्छा वर्षों से एस. आर. एफ़. के वालंटरी लीग न्यूज़लैटर में प्रकाशित गुरुदेव की शिक्षाओं, तथा सेल्फ-रियलाइज़ेशन फ़ैलोशिप और योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ़ इण्डिया के सदस्यों एवं संन्यासियों को भारत तथा अन्यत्र विपदाओं से

पीड़ित व्यक्तियों की सेवा करते हुए दिखाए गए चित्रों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई होगी। मैंने सोचा कि, "मुझे भी अब यही करना चाहिए।" और इससे मेरे मन में यह विचार आया कि, "सहानुभूति का बीज ही बड़ा होकर निःस्वार्थ सेवा का वृक्ष बनता है।"

"और मैंने जाना कि यह जीवन हमें भगवान द्वारा सौंपा गया एक दिव्य कर्तव्य और उत्तरदायित्व है, तथा हमारा जन्म इस समय इसलिए हुआ है क्योंकि हमारे कर्मों का यही विधान है। ईश्वर ने यह इसलिए उचित समझा क्योंकि हमारे भीतर उतनी शक्ति है कि हम स्थिति को समझ सकते हैं और इस कठिन घड़ी में मानवमात्र के उद्धार में सहयोग दे सकते हैं।"

मैंने अनेक संगठनों और अस्पतालों से स्वयंसेवक बनने के लिए टेलीफोन पर बात करनी चाही किन्तु सभी नंबर बेहद व्यस्त होने के कारण सफल न हो सका। एक सज्जन ने मेरे मन के सच्चे सेवाभाव को देख कर मुझे विपदाओं से निपटने के लिए बनाए गए रेडक्रॉस के एक केन्द्र का टेलीफोन नंबर बता दिया जो सर्वसाधारण के लिए न होने के कारण टेलीफोन डायरेक्टरी में सम्मिलित नहीं किया गया था। इस बार मैं बात करने में सफल हो गया और उसी रात केन्द्र पर सहायता करने पहुँच गया। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैं टेलीफोन पर रहने का कार्य कर सकता हूँ? किन्तु मेरे "हाँ" कहने से पहले ही एक सुपरवाइज़र वहाँ आ गए और उन्होंने पूछा कि क्या कोई न्यूयॉर्क का कोई ऐसा स्थाई निवासी है जो बाहर के राज्यों से आने वाले कार्मिकों और स्वयंसेवकों को दुर्घटना स्थल के आसपास ले जाने का कार्य कर सके। दुर्घटना स्थल के पास काम करने की मेरी इच्छा पूरी हो गई। बाद में मुझे दुर्घटना से प्रभावित लोगों की सेवा का भी अवसर मिला, परिवारों की भी और बचावकर्ताओं की भी।

परमहंस जी ने कहा था कि, "मोरियों में झांकने की क्या आवश्यकता है जब सुन्दरता स्वयं हमारे चारों ओर फैली हुई है?" इसका यह अर्थ नहीं है कि दूसरों के कष्टों और उन पर हो रहे अन्याय की उपेक्षा करें या उनके प्रति संवेदनाहीन हो जाएँ। किन्तु हमें इसके ऊपर उठ कर सोचना चाहिए ताकि द्वैत के परे जाकर समसत्वस्थ होकर सेवा कर

सकें। बड़ों और बच्चों, दोनों से संबंधित भयावह और चमत्कारपूर्ण घटनाओं को सुनते-सुनते मैं दुर्घटना के पीछे छिपे "सौंदर्य" को देखने का प्रयत्न करने लगा। एक ऐसा ही चमत्कार एक माँ और उसके खोए हुए बेटे के संबंध में देखने को मिला। वह बालक ट्रेड सेंटर के निकट एक डे केयर केन्द्र से लापता था। लोगों की भीड़ को बंदरगाह से नावों द्वारा सुरक्षित स्थानों पर ले जाया जा रहा था, उस माँ को धक्का देकर आगे कर दिया गया और बालक को ढूँढने की अनुमति भी नहीं दी गई। उसके मन में आक्रोश तो बहुत था किन्तु फिर भी उसने अपने मन में ईश्वर के प्रति विश्वास को बनाए रखा। कुछ घंटों के बाद उसने न्यू जर्सी नदी के पार अपने छोटे से बालक को एक बिल्कुल अजनबी के साथ चलते हुए पाया जो भीड़-भाड़ में भटकते हुए उस बालक की सहायता करके उसे सुरक्षित स्थान पर ले आया था। किसी प्रेरणावश वे एक-दूसरे के निकट आ गए थे।

अनेक वर्षों से ट्विन टॉवर्स नगर की महानता के प्रतीक थे, आसमान से बातें करते हुए अपनी दृढ़ता और सुरक्षा द्वारा बाह्य शक्ति के द्योतक लगते थे। फौलाद से बने, नट-बोल्ट से जुड़े ये मजबूत टावर आखिरकार कितने कमजोर निकले। इससे याद आता है कि अपने अंतर में स्थित होकर उस शक्ति को पाना कितना महत्वपूर्ण है, जो केवल आत्मा ही दे सकती है। जैसा कि गुरुदेव ने कहा है, हम सभी के पास वह साजोसामान है जिसकी आवश्यकता "टूट कर गिरते विश्व के नीचे भी हमें अविचल खड़े रहने" के लिए होती है। विश्वास, प्रेम और लयबद्ध होने के यह पाठ सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। और यह कम उम्र में ही आरंभ हो जाने चाहिए। एक बालक ने मुझे यह बताया कि अब वह कैसे भटका हुआ अनुभव करता है क्योंकि वह इन टावर्स को देख कर ही अपने विद्यालय का रास्ता ढूँढता था। उसने पूछा, "अब क्या करूँ?"

शास्त्रीय संगीतज्ञ होने के कारण ध्वनियों को पहचानने के लिए मैंने कानों को बहुत गहन प्रशिक्षण दिया है किन्तु इन दिनों के दौरान मुझे सुनने का सच्चा अर्थ पता चला: दूसरों के "संगीत" को गहराई में जाकर सुनने की क्षमता का विस्तार करना। कई बार हमें अत्यंत दुःखद स्वर सुनाई देते थे, यहाँ तक कि क्रोध भरे भी, किन्तु अन्य अवसरों पर शान्ति और समर्पणपूर्ण स्वर सुनाई देते थे। सेवा ने एक अन्य आयाम ग्रहण किया जिसमें शरीर गतिशील नहीं होता, वह ऐसा आयाम था जिसमें अपने हृदय के द्वार खोलने होते थे, जिसमें दूसरी आत्मा प्रवेश करके कष्टों से हट कर शरण ले सके : "हे प्रभु, मुझे शान्ति प्रसारित

करने वाला अपना यंत्र बना ले''* श्रवण करना एक ऐसी सेवा है जिसमें स्वयं को पूरी तरह भुला देना होता है। प्रेमपूर्ण हृदय से धैर्य के साथ सुनना।

स्वयंसेवा के आरंभिक दिनों में मेरे लिए ध्यान लगाना कठिन होता था। मैं देर तक ध्यानावस्थित नहीं रह पाता था। दिन भर की थकान और विविध विचारों भरे मस्तिष्क के कारण मुझे ध्यान में बैठना कठिन लगता था। किन्तु सेवा करने में जो आनन्द और प्रेम मुझे मिलता था उससे मैं पुलकित रहता था। प्रतिदिन जब हम साइट से बाहर निकल कर जाते थे तो सुरक्षा व्यवस्था के पीछे खड़े सैकड़ों लोग प्रसन्नतापूर्वक हमारा अभिनन्दन करते थे और पुकार कर कहते थे, ''धन्यवाद!'' यह भावनाएँ इतनी शक्तिशाली होती थीं कि मुझे लगता था कि मैं उस गुब्बारे की तरह फट जाऊँगा जिसमें और अधिक हवा की जगह शेष न रही हो। जैसा कि गुरुदेव ने कहा है, ''यदि ईश्वरीय प्रेम का एक कण भी तुम्हें छू भर जाए तो तुम्हें उस असीम आनन्द की अनुभूति होगी जिसे तुम अपने अन्दर धारण नहीं कर सकोगे।'' मेरी समझ में आ गया कि मुझे इस आनन्द को अपने लिए ही रखने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। बल्कि परिश्रम के फल के रूप में इसे ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए। यह करने से कितनी निश्चिंतता आती है, जब हम सब कुछ वापस ईश्वर के हाथों में सौंप देते हैं। बाद में ज्ञानमाता के एक पत्र में मैंने पढ़ा : ''सब चीजों को यह मान कर ही स्वीकार करो कि वे ईश्वर ने दी हैं। रात को सब कुछ वापस उसे ही सौंप दो। अपने पास कुछ मत रखो, इस प्रकार दिन की समाप्ति पर किसी भी प्रकार की कोई जिम्मेदारी तुम्हारी नहीं रहेगी।'' सब कुछ छोड़ दो। मन में ऐसे विचार धारण करने, और सब चीजों पर से अपना अधिकार हटा देने से मैंने पाया कि मेरा ध्यान गहराई से लगने लगा है।

''इतने अधिक प्रेम की आवश्यकता थी, केवल वहीं नहीं बल्कि हर जगह। मेरा केन्द्रबिन्दु ही यह बन गया था : कि मैं जितना भी दे सकता था, उससे कहीं अधिक मुझे देने की आवश्यकता थी!''

कई लोगों ने मुझसे पूछा है कि दुर्घटनाग्रस्त स्थल के इतना समीप रह कर मुझे कैसा लगा। सबसे पहले, वहाँ जाने पर मुझे बहुत श्रद्धा और सम्मान की अनुभूति हुई — जिन्होंने वहाँ अपने

* ''द प्रेयर्स ऑफ सेंट फ्रान्सिस'' से।

प्राणों की आहुति दी उनके लिए श्रद्धा, और जिन्होंने बचाव और सफाई के लिए अनथक कार्य किया, उनके लिए सम्मान की अनुभूति। दूसरे, मुझे अत्यधिक शान्ति का अनुभव हुआ क्योंकि वहाँ मेरा ध्यान सदा शान्ति, प्रेम और दूसरों को आराम पहुचाने के प्रति केन्द्रित रहता था। इतने अधिक प्रेम की आवश्यकता थी, केवल वहीं नहीं बल्कि हर जगह। मेरा केन्द्रबिन्दु ही यह बन गया था : कि मैं जितना भी दे सकता था, उससे कहीं अधिक मुझे देने की आवश्यकता थी! स्वयं को समर्पित करने की हमारी भावना को हर समय परिष्कृत और पोषित करने की आवश्यकता होती है।

मैं वहाँ पर अपने पहले दिन को कभी नहीं भूल सकता जब बचाव कार्य के स्थल पर मैं दोपहर के भोजन के लिए गया। हम लोग मेजों के चारों ओर बैठ गए — रेड क्रॉस, मुक्ति फौज, अग्निशमन सेवा, पुलिस, आपात्कालीन चिकित्सा सेवा के लोग, लोहे और फौलाद का काम करने वाले, सफाई कर्मचारी, युवा और वृद्ध, धार्मिक नेता, वगैरह-वगैरह — दुनिया भर के लोग वहाँ एकत्रित थे। किन्तु वहाँ तुम, मैं और वे जैसी कोई भावना न थी। केवल *हम लोग* की भावना थी। वास्तव में एकता की सच्ची भावना दिखाई देती थी। किसी प्रकार का कोई भेद ही न था। उम्र, लिंग, रंग, धर्म, व्यवसाय सब महत्वहीन थे — विचार था तो केवल मिलजुल कर प्रेम और आनन्द सहित सेवा का। भाईचारे और बिना शर्त प्रेम की भावना इतनी प्रबल और स्पष्ट थी कि मैं खा ही नहीं पा रहा था — और मैंने वास्तव में भोजन ही नहीं किया! मेरी जीवन रक्षा मात्र प्रेम की प्रबल शक्ति ही कर रही थी। यही स्पन्दन पूरे नगर में भी फैला हुआ था। लोग एक दूसरे को तुरंत ही न तो देख रहे थे, न पहचान रहे थे और न ही एक दूसरे की उपस्थिति का उन्हें कोई भान था। न्यूयॉर्क की रोजाना की अफ़रातफ़री का स्थान मुस्कराहट और सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि और सद्भावना ने ले लिया था। मैंने सोचा, "हमें सदैव इसी प्रकार व्यवहार करना चाहिए।"

क्या लम्बे समय तक यह स्थिति बनी रहेगी? मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि सदा यही स्थिति बनी रहे। इतने बड़े नगर में शायद यह आसान कार्य नहीं होगा किन्तु हम सब को मिल कर अपने जीवन को सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए। यह एक साझा काम है। समर्पण, लगन और उत्तरदायित्व के बिना कोई कार्य उचित ढंग से नहीं किया जा सकता। उन्नति और बड़े काम करने के लिए जागरुकता का होना पहला कदम

है। सद्भावना का यह वातावरण चाहे जितनी भी देर तक बना रहे, मेरे और अन्य अनेक लोगों के लिए यह सदा संजो कर रखने योग्य वरदान और उपहार बना रहेगा।

ग्राउंड ज़ीरो 'कहलाने वाला यह दुर्घटना स्थल एक शानदार यादगार बन गया है। ज़ीरो (शून्य) की अनेक परिभाषाएँ हैं जैसे, "खाली, कुछ न होना, निम्नतम बिन्दु तथा अनुपस्थित आदि।" ऐसा लगता है जैसे हम बिल्कुल तली में पहुँच गए हों — भौतिक रूप से भी और आध्यात्मिक रूप से भी। किन्तु शून्य आरम्भ का बिन्दु भी है। यह वह स्थान है जहाँ आकर मूल प्रकृति — बिना शर्त प्रेम, सहानुभूति और एकाकार — के अतिरिक्त हमारे पास और कुछ शेष नहीं रह जाता। परिवर्तन शाश्वत रूप से चल रहा है : केवल ईश्वर ही स्थिर है। यह क्षण इस स्थिरता के आधार पर जीवन के पुनर्निर्माण का क्षण है, व्यक्तिगत रूप से भी और सामूहिक रूप से भी। यहाँ भौतिक धरातल तो नष्ट हो गया किन्तु आन्तरिक रूप से सभी में आध्यात्मिकता की नींव पड़ गई। इस पथ पर चाहे हम नए हों, चाहे पुराने यात्री — हमें निर्माण करने वाले दल की भाँति अपने जीवनपथ की राह में आने वाले कंकड़ पत्थरों को हटाते हुए पुनर्निर्माण का कार्य करते हुए चलते जाना चाहिए। आरम्भ में सब कुछ बुरा-सा दिखाई देता है किन्तु जैसे-जैसे बुराइयाँ दूर होती जाती हैं और अच्छाई मजबूती पकड़ती जाती है सब कुछ स्पष्ट दिखाई देने लगता है और यह दिखाई देने लगता है कि अंततः सामने क्या आने वाला है। इस दु:खद दुर्घटना से हमें सद्भाव और बंधुत्व, ईश्वर के साथ एकीकरण मानवता के लिए अधिक गहरी सहानुभूति, नि:स्वार्थ सेवा तथा जीवन के हर क्षेत्र और हर विचार में बिना शर्त प्रेम आदि सद्गुणों को ग्रहण कर लेना चाहिए, अन्यथा हमें इससे नकारात्मक विचारों और कर्म के सिवा और कुछ हाथ नहीं लगेगा। किसे चुनना है यह सदा हमारे अपने हाथ में है। किन्तु सत्य यह है कि एक सामूहिक निर्णय ही हमारे भविष्य को निर्धारित करेगा, सत्य की खोज करेगा कि हमारे लिए केवल एक ही रास्ता है। और वह है शून्य से आरम्भ करना। ❑

क्रोध का सामना





द्वारा मार्क एपस्टेइन, एम. डी.

क्रोध को हम एक "बुरा" आवेग मानते हैं, परन्तु कुशलता से उसे वश में करना मुक्तिदायक हो सकता है।

ध्यान और योग का गहन अभ्यास कभी-कभी ज्ञानवर्धक होने के बावजूद एक दुष्कर कार्य हो सकता है। शान्त, अनुशासित और आत्मपरीक्षण के लिये प्रेरित करने वाले वातावरण हमें अपनी आसक्तियों और कमजोरियों का सामना करने के लिये विवश करते हैं। फिर भी मेरे अनुभव में यह गहन अभ्यास गृहस्थ जीवन के अनवरत संघर्ष और अपेक्षाओं के मुकाबले कहीं अधिक सरल है। कई बार साधारण से प्रतीत होने वाले कार्य जैसे कि अपने बच्चों को होम-वर्क में मदद करना अक्सर मेरी आध्यात्मिक उपलब्धियों जैसे कि धैर्य, सहनशीलता और विशाल हृदयता की कड़ी परीक्षा लेते हैं और मुझे अपनी निकृष्ट प्रकृतियों के समक्ष इस प्रकार खड़ा कर देते हैं जो परंपरागत आध्यात्मिक प्रविधियों द्वारा संभव नहीं। कुछ ही समय पूर्व मैं अपने 10 वर्षीय बेटे के साथ एक छोटे से विवाद में इस प्रकार उलझ गया कि विवेकपूर्ण समाधान ढूँढ़ने के लिए मुझे विवश होकर समस्या की

** मार्क एपस्टेइन, एम. डी. एक प्राइवेट मनोचिकित्सक हैं तथा न्यू यॉर्क विश्वविद्यालय में मनोचिकित्सा के सहायक प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं वह बौद्ध ध्यान पद्धति के साधक हैं।*

गहराई में उतरना ही पड़ा। आहिस्ता-आहिस्ता अनजाने में विवाद इतना आगे बढ़ गया कि उस पर मेरा नियंत्रण नहीं रहा और वापस मुड़ने के लिये मुझे अपनी सारी आध्यात्मिक शक्तियों को दाव पर लगाना पड़ा।

"6 × 3 के गुणा करने पर प्राप्त हुई संख्या के सब गुणज (फैक्टर) बताओ?"

यह प्रश्न सामने पड़े पृष्ठ से हमें मुँह चिढ़ा रहा था, जब मैंने अपने बेटे को उस पर अपने मन को एकाग्र करने के लिये कहा। वर्ष पर वर्ष उसका विद्यालय यह आश्वासन देने के बावजूद कि इन नियमित परीक्षाओं का अधिक महत्व नहीं है, अपने सब निर्णय इन परीक्षाओं के आधार पर ही कर रहा था। इसलिए मैंने यह निर्णय किया था कि मैं परीक्षा से पहले उसे इन प्रश्नों का कुछ अभ्यास कराऊँगा! और यह मेरा प्रथम प्रयत्न था! लेकिन उसने शायद अपनी शाम इस तरह बिताने की नहीं सोची थी।

"6 को 3 से गुणा करने पर आई संख्या के सब गुणज (फैक्टरस) बताओ?" मैं उसकी निगाह चार संभावित उत्तरों की तरफ निर्देशित कर रहा था। मैं अब जानता हूँ, लेकिन तब मैंने यह जरुरी नहीं समझा कि मेरे बेटे ने चौथी कक्षा में गुणज के बारे में नहीं पढ़ा था। लेकिन फिर भी परीक्षा कुंजी में यह प्रश्न था और सही उत्तर खोजना उसकी योग्यता के बाहर नहीं था यदि उसे गुणा और गुणज का अर्थ पता होता। लेकिन मैं अपने बचपन में जिस उत्सुकता से प्रश्नों का हल खोजता था, उतनी उत्सुकता वह प्रकट नहीं कर रहा था। वह मेरे पास सोफे पर मुँह सिकोड़कर बैठ गया और चाह रहा था कि इस परिस्थिति से जितनी जल्दी संभव हो निकला जाये।

उसने जल्दबाजी में एक तीर चलाकर देखा। संदेह में डूबे हुए क्षीण प्रश्नार्थक स्वर में उसने कहा : "दो, चार और आठ।" मेरा दिल डूब गया। वह कोशिश भी नहीं कर रहा था। मैंने सुझाव दिया "इस प्रश्न को विभाजित करके देखते हैं।" मुझे लग रहा था कि वह इस प्रश्न को एक बड़ी मुसीबत के रूप में देख रहा है। लेकिन मैं अपना धैर्य खो रहा था और वह मेरी आवाज़ से यह भाँप चुका था।

"प्रश्न को विभाजित करना क्या होता है?" उसने चिढ़ते हुए पूछा। हमारी बातचीत के दौरान वह बच्चों के लिये बना कोई स्वास्थ्यवर्धक आहार एक हरी प्लास्टिक थैली में से चूस रहा था, यह एक प्रकार का बैंगनी दही था जिसके लिये किसी बर्तन की आवश्यकता नहीं पड़ती। गणित के उस प्रश्न को सुलझाने के हमारे विचार-विमर्श के दौरान उसने वह पिचकी हुई थैली कॉफी टेबल पर रख दी।

"इसे बाहर फेंको" मैंने आदेश दिया। अन्ततः मुझे चिल्लाने का बहाना मिल गया यह देखकर मैं कुछ सन्तुष्ट हुआ।

जल्दी-जल्दी में उस पिचकी थैली से उसने अनजाने में सोफे पर कुछ बैंगनी दही की बूँदे गिरा दी। मैं गुस्से में उसे बुरी तरह डाँटते हुये रसोई से धब्बे छुड़ाने के लिए सेल्टज़र लेने भागा। उसने न केवल अवस्था में मेरी इच्छा हो रही थी कि उस धब्बे छुड़ाने वाले तरल पदार्थ की बौछार उस पर कर दूँ। लेकिन मैंने किसी तरह से अपने आप को रोका, फिर भी मैं पूरी तरह से अपने आप को नहीं रोक पाया और मैंने थोड़ा सा सेल्टज़र उस पर डाल दिया, इस आशा में कि वह शान्त हो जाएगा। लेकिन इसका परिणाम बिल्कुल विपरीत हुआ और वह गुस्से में और अधिक

"पारिवारिक जीवन जागृति लाने में इसलिए इतना सहायक सिद्ध होता है क्योंकि यह हमारी भावनाओं को इतनी भिन्न-भिन्न प्रकार से उभारता है कि हम उन्हें अनदेखा नहीं कर सकते। क्रोध से दो-दो हाथ करना अपने आप में एक योग है।"

उस अधूरे प्रश्न को सुलझाने से मना कर दिया वरन् सोफे को साफ करने में मेरी मदद करने से भी इंकार कर दिया और अपने कमरे में भाग गया। उस समय मैंने अनुभव किया कि मेरी शिष्टतायें मेरा साथ छोड़ रही हैं; मैंने झुंझलाते हुये सोचा कि मैं तो केवल इसको गणित की परीक्षा की तैयारी में मदद करना चाह रहा था, लेकिन मुझे लग रहा था कि कहीं उसको कुछ सिखाने के बदले मैं बिगाड़ न दूँ। मैंने प्रण किया कि मैं ऐसा नहीं होने दूँगा। उसे किसी प्रकार मैं वापिस सोफे पर लाया, लेकिन वह चाहता था कि उसे अकेले छोड़ दिया जाये, इसलिये वह मुझ पर बुरी तरह से चिल्ला रहा था। उस क्रुद्ध चिल्लाने लगा। मैंने देखा कि वह मेरी पत्नी के बागवानी के औज़ार कर्वी और हेंगी जो कॉफी टेबल पर पड़े थे की तरफ़ देख रहा था। यह सोचरकर कि वह इसमें से किसी को भी उठाकर मेरी तरफ़ झपट सकता है, मैं एक क्षण को काँप उठा। तब मैंने अनुभव किया कि यह स्थिति कितनी जल्दी और अधिक नियंत्रण से बाहर निकल सकती है।

तभी फ़ोन की घंटी बज उठी जिसने क्षणभर के लिए हमारे उग्र होते वाकयुद्ध को रोक दिया। मेरी पत्नी फ़ोन पर अपने मित्र से बातचीत करने लगी और हमारी बहस ज़ारी रही! लेकिन उस एक क्षण के लिए रुके युद्ध में मैंने पुनः अपने आप को

संभाल लिया। मैंने उसका ध्यान बटाँना शुरू कर दिया और साथ ही साथ स्थिति को सामान्य बनाने के विषय में सोचने लगा। अंत में मैंने उसके हाथ में सेल्टज़र की बोतल थमा दी। मुझे पूरी तरह भिगोने के बाद वह संतुष्ट नज़र आने लगा। जब तक मेरी पत्नी ने बात समाप्त की फर्श गीला हो चुका था और हम पुनः गणित के अभ्यास में लगे थे। बाद में उसी दिन मेरी पत्नी ने बताया कि कैसे उसकी मित्र फोन पर हम दोनों का एक दूसरे पर चिल्लाना सुनकर हैरान हो रही थी।

"यह कैसा शोर है?" उसने हैरान होकर पूछा, "मैं अपने पिता पर कभी भी इस तरह से नहीं चिल्लाई मुझे यथार्थ में अपने गुस्से को पीना पड़ता था।"

उसकी आलोचना से मेरे इस विचार को बल मिला कि मैंने स्थिति को ठीक प्रकार से नहीं संभाला था। हालाँकि एक अच्छे अभिभावक के रूप में जहाँ मैं अनुशासन स्थापित करने और गणित का अभ्यास कराने की कोशिश कर रहा था, वहीं मैं अपनी व्याकुलता उस पर थोपने की कोशिश कर रहा था। परीक्षाओं में उसकी तैयारी के विषय की चिन्ता में मेरा व्यवहार अनियंत्रित एवं संवेदनरहित हो गया था। मेरी अव्यावहारिक अपेक्षाओं और आचरण से हतप्रभ होकर वह स्वाभाविक रूप से घबरा सा गया था। मेरे कहेनुसार करने के बदले उसने मेरा विरोध किया। उस समय मैं एक अजीब सी असमंजस की स्थिति में था। मेरे द्वारा उसकी पढ़ाई के लिये बनाई गई कार्यसूची की उसने अवहेलना की थी और अब मुझे न केवल उसके गुस्से से निपटना था वरन् अपनी कार्यसूची की रक्षा भी करनी थी।

इस तरह के प्रसंग हमारी आध्यात्मिक दृढ़ता की परीक्षा लेते हैं। क्षण भर में वे उग्र रूप धारण कर लेते हैं। एक क्षण हम सोफे पर बैठे किसी प्रश्न का समाधान खोज रहे हैं और दूसरे क्षण जीवन मृत्यु के संघर्ष में जुटे हैं। योग और ध्यान के सिद्धान्तों का भावनाओं के अवज्ञाकारी उपद्रवों को कुचलने के लिये प्रयोग करने का प्रलोभन सचमुच बड़ा बलवान होता है। "अंदर और बाहर के सब विनाशकारी तत्वों को एक समान शत्रु समझकर कुचल डालो।" भगवान बुद्ध के प्रति गहन श्रद्धा रखने वाले म्यांमार देश में वहाँ शासन कर रही निर्दयी सेना ने जगह-जगह इस आशय के हरे रंग के बड़े-बड़े, बोर्ड चिपका रखे हैं। स्वाभाविक रूप से उठ रहे क्रोध को आध्यात्मिकता की भाषा प्रयोग करते हुए नियंत्रण करना कोई नयी बात नहीं लेकिन फिर भी हमारी स्वयं की प्रजातंत्र और मानसिक उपचार की विवेकपूर्ण परंपराएँ एक अन्य तरीका अपनाने पर जोर देती हैं। यह जरुरी है कि हम एक बच्चे के विरोध को, उसके उत्पात को महत्व दें,

इसके बिना वे निस्तेज हो जायेंगे — स्वयं की एक अलग पहचान बनाने के अयोग्य, और कोई भी रचनात्मक कार्य करने की इच्छा से रहित। लेकिन साथ ही यह भी जरुरी है कि हम उसके अनावश्यक उपद्रवों को प्रोत्साहन न दें, और उसे अनुशासन एवं सीमा में बाँध कर रखें।

लेकिन यह भी आवश्यक है जैसा कि इंग्लैंड के एक बाल मनोरोग विशेषज्ञ डी. डब्ल्यू विन्नीकोट ने कहा है कि जब कोई बच्चा गुस्से में होता है तब हम न तो प्रतिकार की चेष्टा करें एवं न ही उसे अकेला छोड़ें। माता-पिता का केवल इतना ही कर्त्तव्य हैं कि वे अपने होश संभाले रखें। ऐसा करने के लिये हमें अपने क्रोध को नियंत्रित करना पड़ेगा — न तो उसे दूर धकेल कर और न ही उसे प्रोत्साहन देकर। माता-पिता को अपने क्रोध को कुशलतापूर्वक प्रयोग करने का रास्ता तलाशना होगा। जब बच्चे को लगातार अपने गुस्से को पीने पर मज़बूर किया जाये। जैसा कि मेरी पत्नी की मित्र ने बताया, तो एक तनावपूर्ण वातावरण के हालातों के अनुसार अपने आप को ढालने के वास्ते वे एक झूठा मुखौटा पहन लेते है। यह मुखौटा प्राय: एक 'आज्ञाकारी व्यक्तित्व' के रूप में होता है जिसे विन्नीकोट ''केयरटेकर सैल्फ'' कहते हैं और उसका कार्य माता-पिता या समाज की माँगे पूरी करना होता था न कि स्वयं की। यही वह मुखौटा हैं जिसे उतारने में आध्यात्मिक कार्य हमारी मदद करते हैं। पारिवारिक जीवन जागृति लाने में इसलिए इतना सहायक सिद्ध होता है क्योंकि यह हमारी भावनाओं को इतनी भिन्न-भिन्न प्रकार से उभारता हैं कि हम उन्हें अनदेखा नहीं कर सकते। क्रोध से दो-दो हाथ करना अपने आप में एक योग है। एक तानाशाही सत्ता के समान हम अन्दर और बाहर के सब उपद्रवों को कुचलने को लालायित हो सकते हैं। लेकिन यह मुक्ति का मार्ग नहीं है। जिस परिस्थिति में मैंने स्वयं को पाया था उस योग के दो पहलू थे। मुझे अपने बच्चे के विद्रोह को सम्मान लेकिन प्रोत्साहन नहीं देना था, और मुझे अपने आप को अपनी कार्यसूची उस पर थोपने से रोकना था। उस गरमा-गरमी में उसके क्रोध का प्रयोग कर मैंने स्वयं को अपने द्वारा अनजाने में किये जा रहे क्रिया-कलापों के प्रति जागृत किया। उसके उस व्यवहार के प्रत्युत्तर में मेरा अति कठोर रवैया हम दोनों के मुखौटों को और अधिक पक्का कर देता। उसे उसका क्रोध पीने को मज़बूर करने के बदले मुझे अपने घमण्ड का एक कड़वा घूँट पीना पड़ा। ❑

योगदा सत्संग वार्ता

मनकापुर, उत्तर प्रदेश में 7-10 अप्रैल, 2002 तक साधना संगम

मनकापुर की योगदा सत्संग ध्यान मंडली ने वाइ. एस. एस. के भक्तगणों के लिए, आई. टी. आई. नगरी में, 7 से 10 अप्रैल 2002 तक, साधना संगम का आयोजन किया। यह नगरी प्राकृतिक सुन्दरता से भरपुर वृक्ष-कुंजो के मध्य शान्त ग्राम्य परिवेश में स्थित है। मनकापुर लखनऊ-गोरखपुर रेलवे लाइन पर, गोरखपुर से 110 कि.मि. पश्चिम में तथा अयोध्या से 40 कि.मि. उत्तर में है।

यहाँ बाहर से आने वाले सभी भक्तगणों के स्वागत की पूर्ण व्यवस्था थी। भक्तगणों को स्टेशन से लाने के लिए आई. टी. आई. की बसों का प्रयोग किया गया था।

स्वामी नित्यानन्द गिरि ने, 6 अप्रैल को सायं 6 बजे, आई. टी. आई. प्रेक्षागृह में "साधना संगम" का उद्घाटन किया। उन्होंने लगभग 750 भक्तों के समक्ष गुरुदेव की शिक्षाओं से संबंधित प्रवचन दिया। उनका प्रवचन ध्यानपूर्वक सुना गया। ब्रह्मचारिणी मीराबाई ने भजन गाकर सभी श्रोताओं को मुग्ध कर दिया।

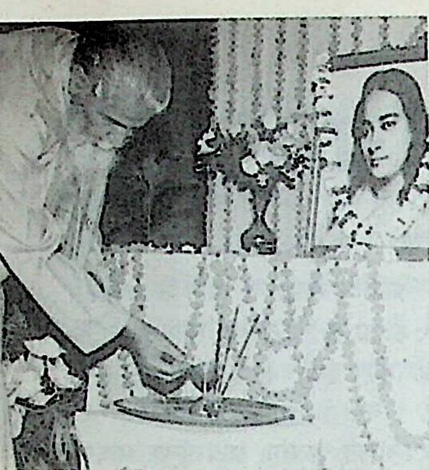
प्रतिदिन सामूहिक ध्यान के कार्यक्रम प्रात: 6:30 से 7:30 तथा सायं 5:45 — 6:30 हुए। इस कार्यक्रम में वाइ. एस. एस. की ध्यान प्रविधियों का पुनरवलोकन, सत्संग, सार्वजनिक भाषण, तथा व्यक्तिगत मार्गदर्शन किया गया। यह स्थान भक्तगणों के ठहरने के निवास से दूर था इसलिए उन्हें लाने तथा ले जाने की समुचित व्यवस्था की गई थी।

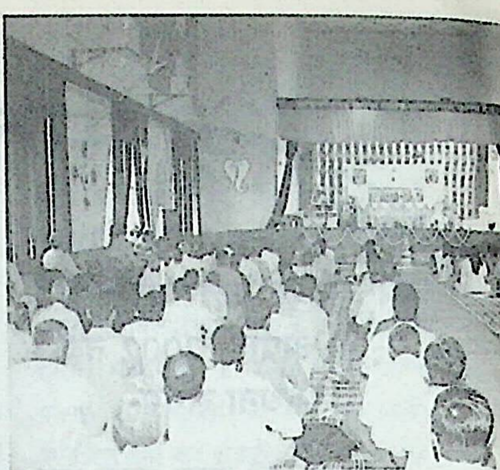
10 अप्रैल को पवित्र क्रिया-योग दीक्षा हुई। इस अवसर पर सभी को गुरुदेव तथा सभी परमगुरुओं की उपस्थिति की अनुभूति हुई।

स्वामी नित्यानन्दजी ने समापन सत्संग करके भक्तगणों को प्रसाद वितरण किया। प्रेम के विशेष प्रतीक के रूप में प्लाईवुड पर बना भगवान श्रीकृष्ण का चित्र सभी बाहर से आये भक्तों को दिया गया।

आई. टी. आई. प्रेक्षागृह में, ब्रह्मचारी हितेशानन्द ने "योग की महत्त्व तथा मानव जीवन का लक्ष्य" विषय पर प्रवचन दिया। इस प्रवचन में अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति, प्रशासनिक अधिकारी तथा जन सामान्य उपस्थित थे।

मनकापुर के भक्तगणों के कठोर परिश्रम, स्नेहपूर्ण सहयोग तथा भक्तिभावना के कारण यह संगम एक मधुर तथा अविस्मरणीय अनुभव बन





(बायें) स्वामी नित्यानन्द गिरि दीप प्रज्वलित कर मनकापुर साधना संगम का उद्घाटन करते हुए, 7–10 अप्रैल, 2002। (दायें) ब्रह्मचारी हितेशानन्द सामूहिक ध्यान का संचालन करते हुए, साधना संगम, मनकापुर, 7–10 अप्रैल, 2002।

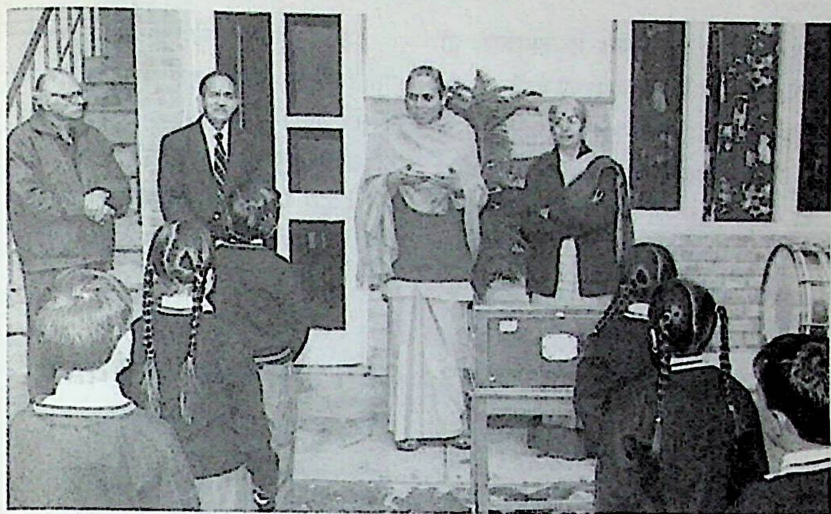
गया। आई. टी. आई. प्रबंधक ने सारी सुविधाएँ नि:शुल्क प्रदान की।

योगदा सत्संग सोसाइटी के दिल्ली के भक्तगणों के बच्चों के लिए शिविर

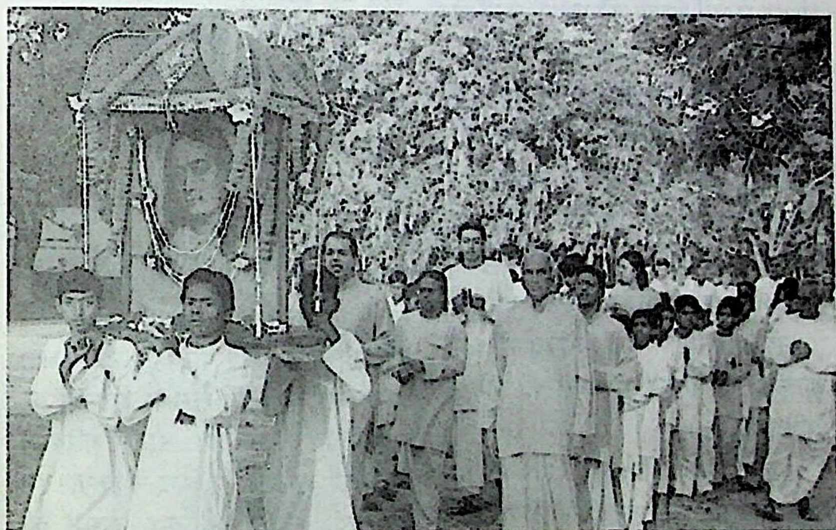
दिल्ली के भक्तगणों के बच्चों के लिए एक और वर्ष, एक और अवकाश के साथ कुछ नवीन और आनन्ददायक अनुभव से परिपूर्ण अवसर आया। स्वामी निर्वाणानन्द गिरि ने 2 जुन 2002 को राँची आश्रम में आठ दिवसीय शिविर का उद्घाटन करके बच्चों का हार्दिक स्वागत किया।

उम्र तथा लिंग के आधार पर 60 बच्चों के लिए अलग-अलग कमरों में उनके माता-पिता से अलग रहने की व्यवस्था की गई जिससे उनके दैनिक कार्यक्रमों में कोई बाधा न हो। बच्चे 6 बजे सुबह उठते थे, कवायद करके हल्का नाश्ता करते थे, उसके बाद शक्ति संचार व्यायाम करके ध्यान करते थे। उन्हें अपने कमरे की सफाई करके, कपड़ों को धोकर, बिस्तर ठीक करके, अपनी चीज़े करीने से रखकर — आत्मनिर्भर बनने की शिक्षा दी जाती थी। सवेरे से रात तक होने वाली अनेक प्रक्रियाओं में मार्गदर्शन के लिए कुछ वरिष्ठ भक्तगणों का चुनाव किया गया था।

गुरुकथा, रामायण पाठ तथा भक्तिसंगीत ने उनके कोमल मन में गहरी भक्ति तथा आस्था उत्पन्न की, संन्यासियों ने अनेकप्रकार की कहानियों के माध्यम से बच्चों को समाज तथा परिवार के प्रति सही दृष्टिकोण को समझाया। उन्होंने बच्चों के साथ उनकी समस्याओं की चर्चा की तथा प्रश्नों के उत्तर भी दिए। बच्चो



स्वामी स्मरणानन्द गिरि परमहंस योगानन्द पब्लिक स्कूल, चंडीगढ़ में किंडरगार्टन कक्षा के उद्घाटन के अवसर पर छात्रों को संबोधित करते हुए, 30 जनवरी, 2002।



राँची आश्रम के आयोजित आदर्श जीवन कार्यक्रम में योगदा सत्संग विद्यालय, जगन्नाथपुर के विद्यार्थियों द्वारा प्रभातफेरी, 22 मार्च, 2002।

को योगासन के विषय में जानकारी दी गई। चित्रकारी तथा हस्तकला के सुन्दर नमूने भी बच्चों ने प्रस्तुत किए।

संध्या समय बच्चे क्रिकेट, फुटबॉल, थ्रो-बॉल, खो-खो जैसे खेलों का आनन्द लेते थे। स्नान करके वे शक्ति संचार व्यायाम करने के पश्चात् ध्यान करते थे। रात्रि के भोजन के बाद भजन गाए जाते थे। सोने से पूर्व बच्चे अन्तर्निरीक्षण चार्ट भरते थे।

बच्चों के लिए विशेष-भोजन तैयार किया जाता था। सभी प्रकार के भोजन अलग स्थान पर बनाए व परोसे जाते थे जिसमें बच्चे भी भोजन परोसने तथा थालियाँ धोने में सहायता करते थे। वे भोजन से पूर्व गुरुजी की प्रार्थना करते थे। बच्चो एवं उनके माता-पिता के लिए आश्रम के आम के बगीचे में पिकनिक की व्यवस्था की गई थी। जिसमें स्वादिष्ट व्यंजन, उत्साहवर्धक खेलों, मन को छू लेते वाली सद्भावना ने बच्चों के साथ-साथ उनके माता-पिता को भी आनन्दित किया। एक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुआ जिसमें अभिनय, भजनों, कविताओं तथा चुटकुलों के माध्यम से बच्चों की प्रतिभा अभिव्यक्त हुई।

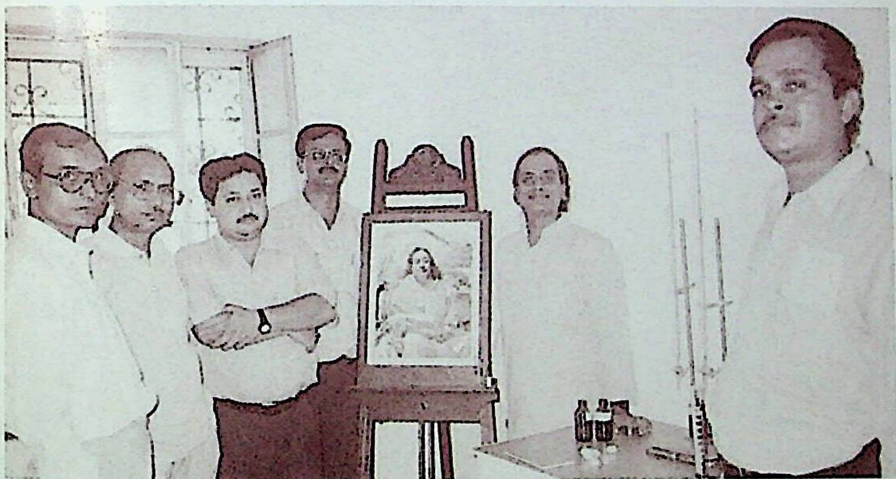
एक पृथक कार्यक्रम के माध्यम से, माता-पिताओं का मार्गदर्शन किया गया कि वे किस प्रकार अपने बच्चों का पालन-पोषण करें जिसमें प्रेम, दृढ़ता, खुलापन, समझदारी तथा विश्वास हो।

अंतिम दिन बच्चे गुरुदेव के कक्ष, स्मृति मन्दिर, लीची-वृक्ष, मातृ मन्दिर में ले जाए गए। संन्यासियों ने प्रत्येक स्थान की आध्यात्मिक महत्त्व की बातें उन्हें बताई। इस शिविर में रहकर सभी बच्चों को जो अविस्मरणीय अनुभव हुए वे सदा उनके साथ रहेंगे।

योगदा सत्संग ध्यान केन्द्र, चित्तूर, आंध्र प्रदेश द्वारा निःशुल्क नेत्र चिकित्सा कैम्प का आयोजन

योगदा सत्संग ध्यान केन्द्र, चित्तूर द्वारा 25-26 अप्रैल, 2002 को पेनौर, चित्तूर जिला, आंध्र प्रदेश में एक निःशुल्क नेत्र चिकित्सा कैम्प आयोजित किया गया। इस कैम्प में कुल 250 मरीज़ों की विभिन्न आँख की बिमारियों की चिकित्सा की गई एवं 45 मरीज़ों का मोतियाबिंद का ऑपरेशन किया गया। इस ऑपरेशन में आँख में लेंस का प्रत्यारोपण किया गया। चित्तूर के भक्तों ने दूर-दराज के गाँवों से आने वालों के लिए परिवहन का इंतजाम किया। सरकार द्वारा लेंस व दवाईयों का व्यय निर्वाह किया गया। भोजन, परिवहन आदि का व्यय योगदा केन्द्र ने किया। इस निःशुल्क नेत्र चिकित्सा कैम्प की सफलता को देखते हुए, योगदा केन्द्र भविष्य में भी इसी प्रकार के कैम्प के आयोजन की योजना बना रहा है। ❑

पंजाब विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा. एम. एम. पुरी, चंडीगढ़ में स्नातकोत्तर के छात्रों को परमहंस योगानन्द छात्रवृत्ति प्रदान करते हुए।



होमियोपैथिक औषधि उत्पादन इकाई का उद्घाटन, दक्षिणेश्वर, ***(बाँए से दाँए)*** डा. बी. डी. मिश्र, डा. आर. एन. घोष, डा. संजय गोस्वामी, डा. पी. पी. मित्र, ब्रह्मचारी माधवानन्द एवं डा. संजय हाजरा, 2 मई, 2002।

(आवरण पृष्ठ, पीछे) वाइ. एस. एस. के दिल्ली के भक्तों के बच्चे, राँची प्रवास के दौरान सांस्कृतिक कार्यक्रम में भगवद्गीता के श्लोकों का पाठ करते हुए, 2-9 जून, 2002।

